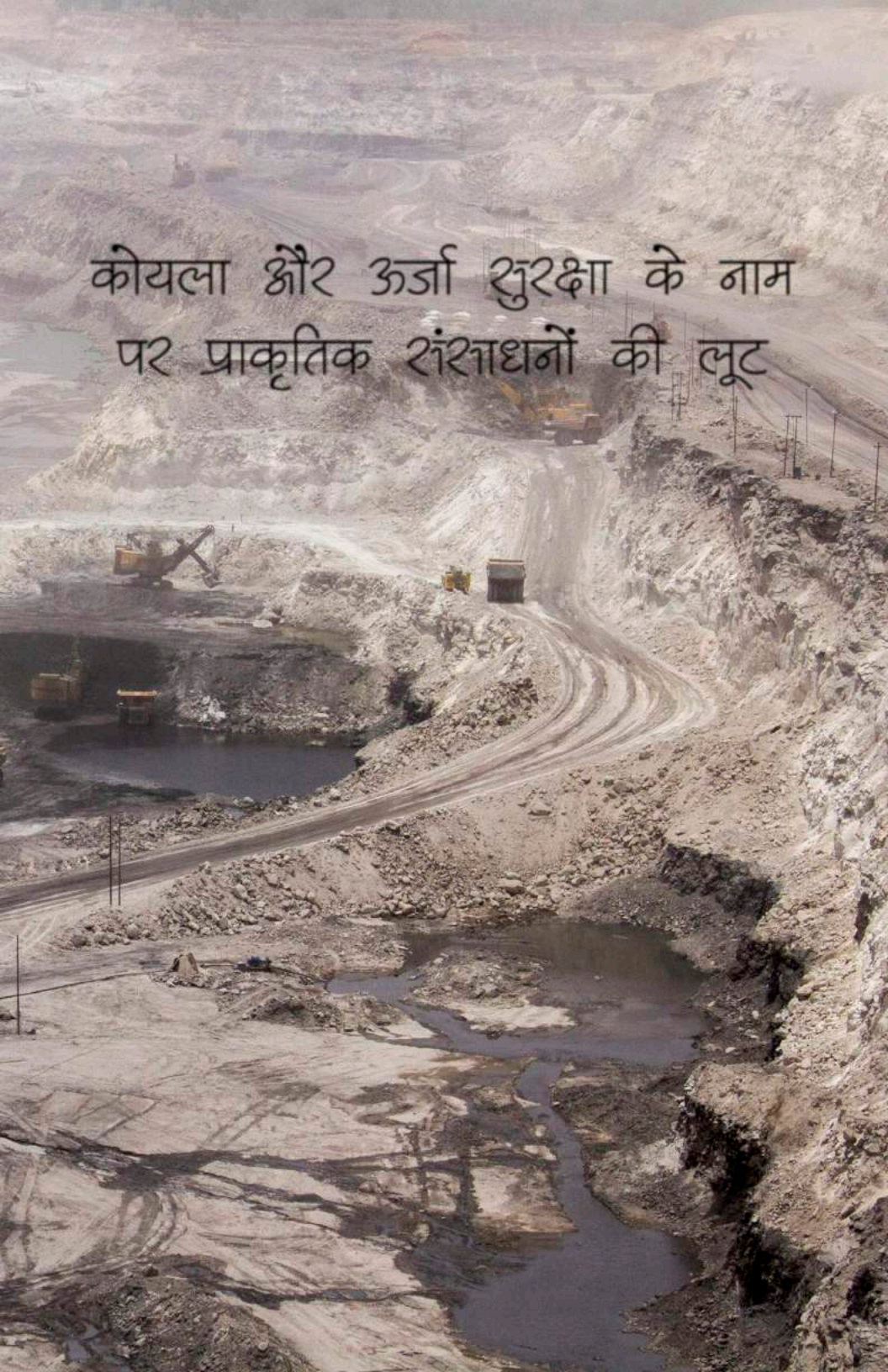
कोयला और ऊर्जा सुरक्षा के नाम
पर प्राकृतिक संसाधनों की लूट

विकास का भ्रमजाल

हर घर में बिजली का खेल,
गरीबो के नाम पर कारपोरेटी लूट

2016

वर्किंग ग्रुप ऑन इंटरनेशनल फाइनेंशियल इंस्टीट्यूशंस
(WGIFIs)

प्रस्तावना

भारत के विकास के लिये सरकार पिछले कुछ दशकों से बड़ी ढांचागत परियोजनाओं की आवश्यकता पर अधिक ज़ोर देर रही है, तथा इसको भारत के सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर से जोड़ कर देख रही है। इन बड़ी ढांचागत परियोजनाओं में बिजली, बड़ी सड़कें तथा खनन जैसी परियोजनाऐं प्रमुख रूप से शामिल हैं। भारत में भारी संख्या में बिजली परियोजनाऐं आ रही हैं जिनमें मुख्य रूप से कोयला आधारित बिजली परियोजनायें, बड़ी परमाणु बिजली परियोजनायें, पार्क तथा हाइड्रो बिजली परियोजनाऐं षामिल हैं। उसमें भी कोयला बिजली परियोजनाओं का एक बड़ा हिस्सा है। इन परियोजनाओं के आने के साथ–साथ ऊर्जा से बिजली बनाने वाले संयंत्र भी तेज़ी से बढ़ रहे हैं। हर घर तक बिजली पहुंचाने के नाम पर बिजली उत्पादकता बढ़ाने के लिये पर्यावरण और वन मंत्रालयों द्वारा वर्ष 2005 के बाद से कोयला बिजली परियोजनाओं को आंख बंद करके मंजूरी दिया जा रहा है। जिन परियोजनाओं को मंजूरी दी, उनके बिजली उत्पादन की क्षमता योजना आयोग के वर्ष 2006 की एकीकृत ऊर्जा नीति में 2032 तक के लिये अनुमानित बिजली की आवश्यकता से काफी अधिक है। भारत में आज भी लगभग 40 करोड़ लोगों के लिये बिजली एक सपना बन कर रह गई है। ये वही 40 करोड़ लोग हैं जो इन भारी प्रभावकारी ऊर्जा परियोजनाओं के आने से विस्थापित होंगे, जिनकी अजिविका और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता का छिनी जायेगी तथा बदले मे उन्हे अस्थमा तथा टीबी जैसी कई बीमारियां मिलेंगीं। ये बड़ी परियोजनायें बड़े पैमाने पर पर्यावरण को हानि पहुंचायेंगीं तथा सैंकडों नदियां और कई किलोमीटर तक समुद्री तटों को प्रदुषित करेगी।

यह प्रारंभिक पुस्तिका मुख्य रूप से कोयले, कोयले पर आधारित परियोजनाऐं, उससे संबंधित क्षेत्रों जैसे ज़मीन, जंगल और वित्तीय संस्थाओं के बारे में एक आधारभूत जानकारी प्रदान करती है। इसका प्रथम भाग भारत में कोयले पर आधारित परियोजनाओं के परिदृष्य के बारे में बताता है। दूसरा भाग ऊर्जा कहां से मिलती है, उसके कौन – कौन से स्त्रोत हैं, हम दैनिक जीवन मे कितनी प्रकार की ऊर्जा लेते है और भविश्य मे कितनी ऊर्जा की आवश्यकता है तथा किन– किन स्त्रोतों से हम ऊर्जा ले सकते है, आदि के बारे मे बताता है। तीसरा भाग कोयले के उपयोग और उसके क्या–क्या असर हो सकते है पर ज़ोर देता है। चौथा भाग कोयले पर आधारित परियोजनाओ को वित्तीय सहायता और वित्तीय सहायता देने वाली संस्थाओं के बारे मे सक्षिप्त जानकारी देता है। पांचवा भाग ज़मीन की लूट के इतिहास व वर्तमान मे इस लूट को सुनिश्चित करने वाले सरकारी हथकंडो के बारे में चर्चा करता है। हम आशा करते हैं कि यह पुस्तिका जमीनी स्तर पर संघर्षशील राजनैतिक कार्यकर्ताओं हेतु उपयोगी साबित होगी। इस पुस्तिका में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग देने वाले सभी साथियों के हम आभारी हैं।

वर्किंग ग्रुप ऑन इंटरनेशनल फाइनेंशियल इंस्टीट्यूशंस

भाग 1

भारत मे कोयला और बिजली परियोजनाओं का परिदृश्य

भारत मे बड़े ढांचागत उद्योगों विशेष तौर पर बिजली, स्टील और सीमेन्ट हेतु कोयला एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। विश्व मे चाइना और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद कोयला खनन में भारत तीसरा सबसे बड़ा देश है। भारत में कोयला मुख्यतः व्यावसायिक ऊर्जा की ज़रूरत का 52 प्रतिशत पूरा करता है, जो कि विश्व में 29 प्रतिषत ही है। तथा भारत मे लगभग 66 प्रतिशत बिजली का उत्पादन कोयले से होता है।

विष्व में भारत बिजली उत्पादन क्षमता में पांचवा स्थान रखता है। भारत सरकार का मानना है कि देष मे बिजली सुरक्षा के लिये कोयला मुख्य स्त्रोत है जो कुल बिजली उत्पादन का लगभग 66–67 प्रतिशत का योगदान करता है, और भविश्य में भी भारत में बिजली उत्पादन के लिये कोयला ही प्रमुख स्त्रोत रहेगा। सरकार बिजली सुरक्षा हेतु देश के हर हिस्से में कोयला आधारित पावर परियोजनाओं को फैलाना चाहती है जो कि देश को एक खतरनाक आर्थिक विकास की ओर ले जा रहा है।

भारत मे बिजली क्षेत्रः

भारत में पहले बिजली क्षेत्र का संचालन सरकारी हाथों में ही था, जिसमें 58 प्रतिशत केंद्र और 32 प्रतिशत राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्रों में आता था और मात्र 10 प्रतिशत निजी हाथों में था। और बिजली क्षेत्र भारतीय बिजली कानून 1910 और बिजली आपूर्ति कानून 1948 के तहत राज्य बिजली बोर्ड के साथ मिलकर संचालित किया जाता था। निजी हाथों में बिजली क्षेत्र ना के बराबर था। भारत का बिजली क्षेत्र नब्बे के दशक के शुरूआती सालों से ही सुधार और पुनःनिर्माण की प्रक्रिया से गुज़र रहा था। सुधार का पहला चरण सन 1991 में शुरू हुआ, जिसका मुख्य उद्देश्य निजी निवेश को बिजली विभाग में प्रवेश दिलाना था। इस चरण मे भारत सरकार ने बिजली आपूर्ति कानून 1948 मे संषोधन कर निजी कम्पनियों हेतु भारतीय बिजली क्षेत्र के दरवाज़े खोल दिये गये। उसके बाद निजी कम्पनियों की रूचि बिजली क्षेत्र की ओर बढ़ी। लेकिन भारत सरकार इससे भी आगे बढ़ते हुए वर्ष 2003 में बिजली क्षेत्र में निजी कम्पनियों की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिये भारत सरकार राष्ट्रीय बिजली कानून 2003 लेकर आई। इस कानून ने बिजली उत्पादन के लिये निजी कम्पनियों को लाइसेंस मुक्त कर दिया, जिसके बाद निजी कम्पनियों की बिजली क्षेत्र में बाढ़ आ गई है। इसके साथ ही पर्यावरण और वन मंत्रालयें भी वर्ष 2005 के बाद से कोयला बिजली परियोजनाओं को आंख बंद करके मंजूरी दे रहे हैं। बिजली सुरक्षा के नाम पर इस साल मे 4000 मेगावॉट की क्षमता वाले अल्ट्रा मेगा विद्युत परियोजनाओं का भी आगाज़ हुआ।

वर्तमान में भारत की बिजली उत्पादन क्षमता 284303 मेगावॉट है जिसमे 173018 मेगावॉट कोयला बिजली परियोजनाओं से आती है जबकि गैस 24473 मेगावॉट और तेल 994 मेगावॉट जो कि बिजली उत्पादन की कुल थर्मल क्षमता को 198494 मेगॉवाट बनाता है। पर्यावरण और वन मंत्रालय ने जिन परियोजनाओं को मंजूरी दी उनकी क्षमता योजना

आयोग के 2006 की एकीकृत ऊर्जा नीति में 2032 तक के लिये अनुमानित बिजली की आवश्यकता से काफी अधिक है। भारत मे 2005–13 के बीच कोयले पर आधारित बिजली परियोजनाओं की संख्या राज्यानुसार सारणी नम्बर एक में देख सकते हैं। सारणी मे स्पष्ट दिखाई देता है कि दो तरह के भौगोलिक क्षेत्र में ये पूरी परियोजनायें बटी है। एक जहां पर घरेलू कोयला उपलब्ध है यानि झारखंण्ड, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और महाराष्ट्र के इलाके, और दूसरा वह समुद्री तट जहां पर विदेशों से कोयला आयात किया जा सकता है, जैसे गुजरात, आन्ध्रा प्रदेश, तमिलनाडू, कर्नाटक और उड़िसा।

भारत के राज्यों मे कुल कोयला आधारित बिजली परियोजनाओं की संख्या पर एक नज़र

राज्य के नाम	स्वीकृत	पाइपलाइन में	कुल
आंध्राप्रदेश	34	21	55
अरूणाचल	0	1	1
आसाम	2	1	3
बिहार	4	4	8
छत्तीसगढ़	30	16	46
दिल्ली	4	0	4
गुजरात	42	19	61
गोवा	1	1	2
हरियाणा	6	4	10
झारखण्ड	13	13	26
कर्नाटक	14	12	26
केरला	0	1	1
मध्यप्रदेश	20	28	48
महाराष्ट्रा	39	29	68
मेघालय	0	1	1
उड़िसा	23	16	39
पंजाब	3	5	8
राजस्थान	26	9	33
तमिलनाड	43	22	65
त्रिपुरा	1	1	2
उत्तरप्रदेश	20	13	33
उत्तराखण्ड	4	0	4
पश्चिम बंगाल	17	5	22
कुल	**346**	**222**	**566**

सन् 1990–91 में देश में सिर्फ 62–63000 मेगावॉट बिजली संयन्त्र मौजूद था तब देश के लगभग 54 प्रतिशत लोगों के पास बिजली नहीं थी। 2001 मे 102000 मेगावॉट के संयन्त्र मौजूद थे तब 42 प्रतिशत लोागों के पास बिजली नहीं थी और आज 2015–16 में देश में बिजली उत्पादन क्षमता 284303 मेगावॉट तक पहुंच गयी जो की पच्चीस साल पहले के मुकाबले तीन गुना अधिक है, लेकिन बिजली ना मिलने वालो की संख्या में सिर्फ 20 प्रतिशत ही गिरावट आई है, जिनमें भी 18 प्रतिशत के पास बिजली खरीदने की क्षमता ही नहीं है। गरीबों के नाम पर इतनी भारी मात्रा मे बिजली का उत्पादन और संयत्र लगाये जा रहे लेकिन उनको उसका फायदा नही पहुच रहा है।

भारत में कोयला सेक्टरः

कोयले की खपत

बिजली क्षेत्र घरेलू कोयला उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत उपभोग करता है उसके बाद दूसरे नम्बर पर स्टील 7–8 प्रतिशत और 3–4 प्रतिशत सीमेंट उद्योग उपभोग करता है। जबकि बाक़ी सभी उद्योग मिलकर 18 प्रतिशत कोयले का उपभोग करते है। कोल इडिंया लिमिटेड पिछले वर्ष मार्च के अंत तक अपने उत्पादन का लक्ष्य पूरा नहीं कर पाया जो कि 468 मिलियन टन था। लेकिन कोयला उत्पादन में वार्षिक वृद्धि लगभग 5.8 प्रतिशत हुई। विश्व में चाइना और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद कोयला खनन में भारत तीसरा सबसे बड़ा देश है जो कोयला बिजली उत्पादन में लगातार वृद्धि कर रहा है। भारत की कोयला खपत 2013 मे 790 मिलियन टन हुई, जो संयुक्त राज्य अमेरिका से लगभग 10 प्रतिशत कम (IEA2014F) अनुमानित की गई थी। थर्मल कोयले का लगभग 85 प्रतिशत अर्थात 665 मिलियन टन कोयले का खपत भारत में हुआ। जो बचा उसकी भरपाई 80 मिलियन टन मेटलर्जिकल कोयले और 45 मिलियन लिग्नाइट कोयले से की गई। पिछले कुछ दशकों मे बिजली उत्पादन में कोयले का उपयोग पांच गुना बढ़ गया है।

कोयला खनन

विश्व ऊर्जा परिषद के अनुसार विश्व का लगभग 7 प्रतिशत कोयला भारत मे रिज़र्व है।

देश के अंदर कोयला उत्पादन में वृद्धि हुई है। वर्ष 2002–03 से 341 मिलियन टन से बढ़कर वर्ष 2012–13 में 557.5 मिलियन टन हो गया है। कोयला उत्पादन वृद्धि दसवी पंचवर्षीय योजना में 5.7 प्रतिशत थी जो ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में घटकर 4.6 प्रतिशत रह गया। वर्ष 2014–15 मे 612.44 मिलियन टन कोयला का उत्पादन किया था।

कोयले का आयात

देश में कोयला कमी की भरपाई विदेशी कोयला के आयात द्वारा की जाती है। वर्ष 2013–14 में कोयले की मांग 769.69 मिलियन टन थी लेकिन 614.55 मिलियन टन कोयले की पूर्ति ही भारत की खादानों से सरकार कर पाई थी। जिससे लगभग 154.4 मिलियन टन की कमी हुई जिसकी भरपाई इडोनेशिया, ऑस्ट्रेलिया, साउथ अफ्रीका और संयुक्त राज्य अमेरिका से आयात कर की गई थी। कोयला मंत्रालय के अनुसार वर्ष 2014–15 में लगभग 212.103 मिलियन टन कोयले का आयात किया गया था जो कि पिछले साल की अपेक्षा 27 प्रतिशत बढ़ गया। भारत में कोयला निर्यात करने में ऑस्ट्रेलिया कोकिंग कोल का लगभग 75 प्रतिशत और इंडोनेशिया नन कोकिंग कोल का 80 प्रतिशत निर्यात करता है। इसके आलावा संयुक्त राज्य अमेरिका और साउथ अफ्रीका भी कोयला निर्यात करते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में कोयले से संबंधित कई विवाद और घोटाले सामने आये हैं, इसके बावजूद भारत में उद्योग और सरकार दोनों ही कोयले को बिजली का सबसे भरोसेमंद और महत्त्वपूर्ण साधन मानती है। भारत के सुप्रीम कोर्ट, केंद्रीय सतर्कता आयोग, भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक एवं मीडिया ने कोयला परियोजनाओं और खनिज के आवंटन और नीलामी में हुए अनियमितता, भ्रष्टाचार, धोखाधडी, दुराचार और गड़बड़ियों की पुष्टि की है। ऐसी बड़ी ऊर्जा परियोजनाऐं स्थानीय लोगों के लिये विकास कम पर विनाश अधिक लाती हैं। उनकी भूमि केवल अधिग्रहित ही नहीं की जाती है बल्कि उस भूमि पर निर्भर हज़ारो लोगों की आजीविका को छीन लिया जाता है। ना तो उस समुदाय को कभी कोई विकल्प दिया जाता है ना ही उनको विकल्प के लायक छोड़ा जाता है। इस विनास को रोकने के लिए पूरे देश में कोयला खनन के खिलाफ चल रहे समुदाय संघर्षों को एक साथ लाने की आवश्यकता है। एक दूसरे के साथ अनुभवों को साझा करने की ज़रूरत है तथा सभी संघर्षों को एक आवाज़ देने हेतु रणनीति बनाने की ज़रूरत है। साथ ही स्थानीय संघर्षों को अंतर्राष्ट्रीय संघर्षों से जोड़ने के अवसरों को भी देखना चाहिये। इस पूंजीवादी मानसिकता और कम्पनी राज के माध्यम से जल जगंल और ज़मीन पर कब्जा करने की राजनीति को पुरज़ोर तरीके से उठाना होगा ताकि सत्ताधारी लोगों की अंधी आंखे खुलें और उनके बहरे कानों में लोगों की आवाज़ पहुंचे।

राजेश कुमार एवं अनुराधा मुन्शी

पर्यावरण और वन, जलवायु परिर्वतन मंत्रालय http://www.moef.gov.in/
विद्युत मंत्रालय http://powermin.nic.in/power-sector-glance-all-india

भाग 2

ग्रामीण भारत हेतु ऊर्जा के संसाधन, पहुंच और प्रयोगः जनता के लिए और जनता के द्वारा

ग्रामीण भारत पर केंद्रित लोगों के लिए सुरक्षित, सुलभ एवं सस्ती ऊर्जा पर एक नज़र

इस पृथ्वी पर (और भी यदि कहीं हो तो) प्राकृतिक एवं मानव–नियंत्रित प्रक्रिया के लिए जैविक ('सजीव') एवं अजैविक ('निर्जीव') सभी के लिए ऊर्जा मूलभूत चालक है। पूरा ब्रह्माण्ड, अरबों तारों के समूह, हमारे आकाशगंगा में लगभग 200 अरब तारे और उसके सभी ग्रह–उपग्रह सब ऊर्जा से संचालित होते हैं। उन असंख्य तारों में, ग्रहों में हमारी पृथ्वी भी एक छोटा सा ग्रह है, ऊर्जा हर प्रकार की प्रणाली के संचालन हेतु तथा हर प्रकार की क्रिया के लिए व हर बदलाव के लिए 'बल' प्रदान करती है। इस प्रकार, पृथ्वी पर 'अच्छे जीवन' के स्थायित्व की दृष्टि से ऊर्जा के सभी रूपों की प्रक्रिया, स्रोतों, परिवर्तन एवं उपयोग और पृथ्वी पर जीवन को सहारा देने वाले पारिस्थितिकीतंत्र पर इनके परिणाम को समझना हम मनुष्यों के लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है।

यह एक विशाल पृष्ठभूमि है, और इसे अधिक लोगों द्वारा धरातल पर सुबोध ढंग से संकल्पित करना मुश्किल है। जैसा कि हम सब जानते हैं कि अपने जीवन को उचित एवं सम्मानजनक तरीके से जीने के लिए हम सब को सुलभ, सुरक्षित ऊर्जा की ज़रूरत होती है – स्रोत चाहे जो हों प्राकृतिक या प्रशासन द्वारा अथवा व्यावसायिक रूप से स्थापित। हम लोग सौर, वायु, तेल (पेट्रोलियम), बिजली, कोयला, लकड़ी आदि ऊर्जा के स्रोत को जानते हैं, जिसका हम विभिन्न कार्यों में उपयोग करते हैं। लेकिन ऊर्जा के मूल स्रोत क्या हैं और वे मानव सभ्यता के इतिहास में कैसे आए (पृथ्वी की उम्र 460 करोड़ वर्ष के मुकाबले पिछले 5000–6,000 वर्ष में)। आइए पहले हम एक नज़र डालें ऊर्जा के विभिन्न रूपों पर जिसे हम मनुष्यों ने सदियों से उपयोग किया है, और अब हम कहां हैं?

पृथ्वी पर ऊर्जा के मूलभूत स्रोत – पृथ्वी पर ऊर्जा के चार मूल स्रोत हैं–

1. सूर्य का विकिरणः
   क. मौजूदा सौर–सौर ताप (स्रोत–उत्कृष्ट नाभिकीय समेकन) वायु–सौर तापीय / फोटोवोल्टिक
   ख. संचित सौर–अल्पावधि – जलीय /वायु ऊर्जा (दिनों से सालों तक) – बायोमास, भोजन, पशु/मानव ऊर्जा अन्य (प्रकाश, परिवेश ऊर्जा) दीर्घावधि–गैस हाईड्रेट्स (हज़ारों वर्ष), समुंद्री तापीय/धारा बहुत लम्बी अवधि– (जीवाश्म)–कोयला, तेल, गैस, शेल (कई लाखों वर्ष)
2. आण्विक (स्रोत – अंतरिक्षीय) : विखंडन – यूरेनियम, थोरियम, फ्युजन (भविष्य) – ड्यूटेरियम / ट्रिटियम
3. चन्द्रमा/सूर्य का गुरुत्वाकर्षण : ज्वार–भाटीय ऊर्जा
4. पृथ्वी का आंतरिक ताप– भू–तापीय ऊर्जा

हम देखते हैं कि इस प्रकार विभिन्न स्रोत जैसे तेल, कोयला, लकड़ी, वायु, पनबिजली आदि जिसका हम उपयोग करते हैं, वास्तव में सूर्य से ही मिलते हैं, सिर्फ समय सीमा भिन्न होती है। यद्यपि उनकी उत्पत्ति सूर्य से है, इस तरह इसके रुपांतरण (एक रूप से दूसरे रूप में–हमारी सुविधाजनक उपयोग के लिए) प्रयोग से पृथ्वी पर जीवन पोषण प्रणालियों पर, हम मनुष्यों सहित समस्त अस्तित्व पर विभिन्न परिणाम होते हैं।

मानव सभ्यता ने ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों का कब और क्यों इस्तेमाल कियाः

मानव अस्तित्व के काफी लम्बे समय से हमने ऊर्जा के बहुत ही सीमित संसाधन आधार का इस्तेमाल किया है। नावों, पवन व पनचक्कियों आदि को चलाने के लिए यांत्रिक प्रणालियों के वायु एवं पानी की शक्ति का थोड़ा बहुत उपयोग सहित भोजन, लकड़ी तथा बायो–मास इनका प्रमुख भाग बनाता है।

इसमें पशुओं एवं मानव ऊर्जा का भी सहयोग रहा है। दोनों के मूल स्रोत भोजन/चारा हैं जो कि सौर ऊर्जा से उगते हैं। अब से कुछ सदियों पहले तक मानव अस्तित्व के पचास लाख साल से ज़्यादा (आदिमानव के समय से) चल रहा था। यहां तक कि तथाकथित 'आधुनिक मानव' (जिसकी उत्पत्ति लगभग 55 हज़ार साल पहले हुई और जिन्हें आज पृथ्वी पर मौजूद सभी मानवों का पूर्वज माना जाता था।) इन सीमित चयनों से बंधे हुए थे। ऐसी अन्य कोई तकनीक नहीं थी जिससे यहां तक कि आज के ये 'आधुनिक मानव' किसी व्यापक पैमाने पर अन्य स्रोतों (उस समय तक थोड़ी बहुत कोयले की खोज हुई थी) को निकालें और उसका उपयोग कर सकें। वास्तव में, भूमि पर नियंत्रण, ऊर्जा उत्पादन पर नियंत्रण एवं उसके परिणामस्वरूप निजीकरण (संभवतः प्राकृतिक सामुदायिक संसाधन का पहला निजीकरण) एक समझ से हुई, क्योंकि भूमि लम्बे समय तक भोजन और लकड़ी की ऊर्जा उत्पादन का प्रमुख माध्यम रही है।

मानव इतिहास में तीन महत्वपूर्ण विकास जो 17वीं शताब्दी के मध्य में तेज़ी से हुये। क) कोयले के विशाल स्रोतों की खोज, ख) भाप के इंजन का विकास, और ग) औद्योगिक क्रान्ति का प्रारम्भ। ऊर्जा ग्रहण करने वाले भाप के इंजनों को लकड़ी द्वारा उत्पादित ऊर्जा की अपेक्षा अधिक संकेन्द्रित ऊर्जा स्रोतों की आवश्यकता थी, और कोयला आसान विकल्प

था (हवा से सूखी हुई कठोर–लकड़ी की अपेक्षा कठोर कोयला प्रति किलोग्राम दोगुने से भी अधिक ऊर्जा प्रदान करता है।)। यांत्रिक भाप के इंजनों ने कोयला एवं अन्य खदानों से बड़ी मात्रा में पानी निकाल कर कोयला उत्पादन में मदद की, और उन्होंने – भाप से चलने वाली ट्रेनों या भाप की नावों के माध्यम से खदानों से निकलने वाले कोयले को दूर ले जाने में भी परिवहन के साधन के रूप में काम किया। संयोगवश – ऊर्जा के संकेन्द्रित स्रोतों, विशाल ऊर्जा संसाधनों को लम्बे समय तक भंडारण एवं संचित रखने की संभावना एवं भाप द्वारा चलने वाले यंत्रों से ऊर्जा का संकेन्द्रण उपयोग– इन तीन विकास के आपस में जुड़े हुए होने से पूंजी संग्रह एवं पूंजी निवेष को बढ़ावा मिला। इन गतिविधियों को आगे बढ़ाने वाले अग्रदूत यूरोपियन राष्ट्रों ने पूंजीवादी दुनिया को बढ़ावा दिया।

कुछ दशक आगे चलकर 19वीं शताब्दी के अन्त में पेट्रोलियम के बड़े भण्डार की खोज और प्राकृतिक गैस की खोज से पूंजीवादी व्यवस्था को ओर बढ़ावा मिला। इन गतिविधियों ने इस्तेमाल करने योग्य ऊर्जा के स्रोतों, उनकी निकासी, रूपान्तरण एवं वितरण को उन लोगों के हाथों में केन्द्रित कर दिया जिन्होंने पहले ही धन/पूंजी को संग्रहित करने में व्यवस्था का उपयोग किया था। इस प्रकार पूरी तरह विकेन्द्रीकृत ऊर्जा प्रणाली का प्रचलन और उसका उचित वितरण, कुछ शताब्दियों में अंत हो गया। मानव समाज ने विकास के साथ पूंजीवादी शक्तियों द्वारा ऊर्जा प्रणाली पर पूरी तरह नियन्त्रण कर लिया। यदि हम आणविक ऊर्जा के विकल्प को देखें तो, इसके खतरों के बावजूद, यह अधिक संकेन्द्रित एवं सीमित है।

खतरनाक विकल्पों के अलावा हमारे पास 'उचित' ऊर्जा के विकल्प क्या हैं?:

जैसा कि हमने देखा है कि आज हम तीन 'जीवाश्म कार्बन' पर सबसे अधिक निर्भर हैं (बहुत लम्बे समय तक मृत पेड़–पौधों एवं जानवरों से संचित हुई सौर ऊर्जा, जिसे जीवाश्म कहा जाता है) ये ईंधन हैं – कोयला, पेट्रोलियम या तेल और प्राकृतिक गैस। यहां तक कि वर्ष 2010 में भी, ये तीन ही प्रमुख स्रोत थे जो मनुष्य को करीब 80 प्रतिशत ऊर्जा प्रदान करते हैं। इनके आलावा अन्य तीन महत्वपूर्ण ऊर्जा प्रदान करने वाले स्रोतों में शामिल हैं पनबिजली, परमाणु एवं बायोमास। हालांकि इनमें से पहले दो मुख्यतः बिजली प्रदान करते हैं। सभी नवीन स्रोत (बड़ी पनबिजली को इनमें से एक नहीं माना गया है) कुल मिलाकर दुनिया की ऊर्जा खपत का 5–7 प्रतिशत आपूर्ति करते हैं, इसके बावजूद कि पिछले डेढ़ दषक में ऊर्जा खपत में तेज़ी से बढ़ोतरी हुई है। इसलिए सही नवीन ऊर्जाओं द्वारा आज की प्रदूषणकारी जीवाश्म ऊर्जा स्रोतों को हटाने में लम्बा रास्ता तय करना है। किन्तु इससे एक चिन्तनीय प्रश्न भी उभरता है कि क्या वे सभी समाज जो बड़े स्तर पर ऊर्जा का उपभोग करते हैं, और अब आंशिक रूप से नवीन ऊर्जा श्रोतों की ओर बढ़ रहे हैं – क्या उन्हें इतनी ऊर्जा की आवश्यकता है? बिना इस महत्त्वपूर्ण प्रष्न पर ध्यान दिए ऊर्जा समस्या को हल नहीं किया जा सकता।

''जीवाश्म कार्बन'' जिसने पिछले 250 सालों से मानवीय आवश्यकताओं एवं मांगों की आपूर्ति करने के साथ साथ उसने कई तरह की समस्याएं भी खड़ी की हैं। जिसमें कार्बनडाईऑक्साईड से जलवायु परितर्वन प्रमुख है। ये जीवाश्म ईंधन वायु प्रदूषण, जल प्रदूशण एवं आजीविका विनाश के भी कारक हैं। इसे यथाशीघ्र हटाने की ज़रूरत है। बड़ी पनबिजली–चाहे वह बांध आधारित हो या रन–ऑफ–दि–रिवर किस्म की हो, जो कि पूरी

नदी को कई किलोमीटर लम्बी सुरंग में बदल देती है, ने अपनी विनाशकारी क्षमता को बार–बार साबित किया है। आण्विक ऊर्जा (विखंडन आधारित–यूरेनियम या परिवर्तित थोरियम) को खासकर चेरनोबिल (1986) एवं फुकुशीमा (2011) के अकल्पनीय विनाश के बाद धीरे–धीरे राक्षस के रूप में देखा जाने लगा है। हालांकि इससे पहले भी कई घटनाएं हुई हैं इसलिए सुरक्षित एवं सुलभ ऊर्जा का भविष्य नवीन्य स्रोतों में ही स्थित है।

सूर्य पृथ्वी पर ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। वह इतनी 'तेज़ी' से चमकता है कि पूरी दुनिया के सभी देशों के सभी लोगों को जितनी ऊर्जा चाहिए उसका 5,000 गुना अधिक ऊर्जा प्रदान करता है। इसलिए सूर्य हमारी ऊर्जा की स्वाभाविक पसन्द होना चाहिए। यह याद रखना चाहिए कि इस सौर ऊर्जा में समस्त वायु ऊर्जा, समस्त जलीय ऊर्जा, भोजन एवं बायोमास ऊर्जा का भी एक बड़ा भाग शामिल है। यह भी ध्यान दिया जाए कि सौर ऊर्जा पृथ्वी के बड़े धरातल पर काफी समान रूप से वितरित होती है, और जहां लोगों को इसके उपयोग की ज़रूरत होती है उसके समीप या वहीं उपलब्ध होती है, (यद्यपि उच्च अंक्षासों में सूर्य की सीधी ऊर्जा कम पहुंचती है, पर वहां सूर्य–आधारित वायु एवं जलीय ऊर्जा पर्याप्त मात्रा में होती है।) इस प्रकार सौर ऊर्जा आणविक स्रोत या जीवाश्म ईंधन की बजाय ज़्यादा एवं आसानी से सभी जगह लोकतांत्रिक तरीके से उपलब्ध होती है।

ऊर्जा उपलब्धता एवं ऊर्जा की आवश्यकता की तुलनाः

ऊर्जा के सुरक्षित एवं सुलभ स्रोत जिसे हमारे गांव की आम जनता उपयोग कर सके और उस पर कुछ नियंत्रण कर सके, इस पर ध्यान देने के साथ ही हमें समाज के विभन्न हिस्सों मे ऊर्जा की आवश्यकताओं को भी देखने की आवश्यकता है। चूंकि भारत के ग्रामीण क्षेत्र ऊर्जा से सर्वाधिक वंचित हैं, 2011 की जनगणना के अनुसार भारत के 33 प्रतिशत घरों में बल्ब जलाने के लिये बिजली कनेक्शन ही नहीं थे, और 87 प्रतिशत परिवार के पास आधुनिक ऊर्जा के साधन नहीं थे इसलिए आइए संक्षेप में हम ग्रामीण भारत को ऊर्जा की आवश्यकता पर एक नज़र डालें। (इन असल संभावनाओं पर विस्तार से चर्चा करने पर अधिक स्थान की ज़रूरत होगी)।

1. **सिंचाई** – कई अनुमानों के अनुसार ग्रामीण भारत की कुल ऊर्जा ज़रूरतों का करीब 40 प्रतिशत सिंचाई में खर्च होता है खासतौर पर पानी निकालने एवं प्रबंधन के लिए। आज डीज़ल (प्रदूषणकारी एवं महंगा जीवाश्म ईंधन) और बिजली (और भी अधिक प्रदूशित खास कर कोयले से) अधिकांश पम्पसेट चलते हैं। हालांकि वायु ऊर्जा की उपलब्धता एक समान नहीं है, किन्तु ठीक से रचना की गई, कई ब्लेड एवं हाई–टोर्क से घूमने वाली छोटी आधुनिक पवन चक्कियां (पूरी तरह वायु टरबाईन मशीन नहीं) काफी हद तक इस ऊर्जा की ज़रूरत को पूरा कर सकती हैं। इस तरह की 'उचित नवीन तकनीक' के लिए सरकार द्वारा कोई समर्थन शायद नहीं है। हालांकि कुछ चीनी निर्माताओं ने इस ओर काम शुरू किया है। यहां तक कि निम्नदाब परिस्थितियों के लिए रची गईं हाई–टोर्क वायु टरबाइन, बिजली पैदा कर रही हैं और उच्च–क्षमता वाले पम्पसेट चला रही हैं, उनसे पम्प चलाए जा सकते हैं। इनसे अन्य उपयोगों के लिए भी बिजली उत्पन्न की जा सकती है। पम्प चलाने के लिए अन्य उचित ऊर्जा स्रोत है पशु शक्ति – और दुनिया में सबसे अधिक पशु आबादी भारत में है (बहुत से

क्षेत्रों में जानवरों द्वारा हल चलवाया जाना बहुत तेज़ी से कम हुआ है और गांव के घरों में जानवर बेकार पड़े हैं) – बेहतर और ज़्यादा आविश्कारिक डिजाइन के साथ – ऐसे कामों में इनका उपयोग किया जाना चाहिए। खेती के अर्थशास्त्र में जानवर भी जुड़े होते हैं, और पशुओं तथा उनसे प्राप्त उत्पादनों से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने में मदद मिलेगी। सौर–पीवी पानी के पंपों के लिए सरकार एवं उद्योग के दबाव से (हालांकि तकनीकी तौर पर ठीक है) लागत बढ़ेगी और ग्रामीण समुदायों का नियंत्रण कम होगा।

2. **रसोई और घर की रोशनी हेतु** – गावों में दूसरी सबसे बड़ी ऊर्जा की ज़रूरत रसोई और रोशनी के लिए होती है (बहुत ठंडे क्षेत्रों में गर्मी के लिए भी)। चीन और भारत में बायोगैस संयंत्रों के बहुत सारे डिजाइन हैं जो रसोई और रोशनी दोनों के लिए उपयुक्त हैं। कई आविष्कारिक एवं ऊर्जा दक्ष रसोई के चूल्हों के डिजाइनों से पशुओं एवं कृषि से होने वाले बड़े बायो–मास उत्पादनों का भी बेहतर तरीके से उपयोग किया जा सकता है। इसके दोहरे लाभ भी हैं, रसोई में होने वाले प्रदूषण से होने वाले रोगों में कमी करके, करोड़ों महिलाओं छोटे बच्चों को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करना। 1950 के दशक के आखिर में, भारत सरकार ने सौर कुकर कार्यक्रम शुरू किया था वह सामाजिक अनिच्छा के कारण सफल नहीं हुआ और इसलिए भी क्योंकि वैकिल्पक ईंधन तुलनात्मक रूप से सस्ती दर पर उपलब्ध था। घर के बाहर खाना बनाने के अस्वीकरण को छोटे–छोटे नये कदम उठाकर ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा से वंचित करोड़ों लोगों को सौर रसोई का लाभ दिलाया जा सकता है। मानक पैराबोलोडायल एवं इंसुलेटेड बॉक्स कुकरों के अलावा, अब कुछ नये नवोत्पाद भी हैं, जिनसे इन कुछ समस्याओं को हल किया जा सकता है।, पर तकनीकी और सामाजिक शोध इन बाधाओं का हटाने के लिए ज़रूरी हैं। साथ ही अन्य ईंधनों के बढ़ते दाम और कम होती उपलब्धता इसे सशक्त बना सकते हैं।

प्राकृतिक गैस की कमी–भारत सरकार ने सभी घरों में 'स्वच्छ रसोई ईंधन' प्रदान करने के इरादे की घोषणा की है, लेकिन यदि इसका मतलब सभी के लिए एलपीजी है – तो प्राकृतिक गैस उपलब्धता के गंभीर संकट ने उस मार्ग को प्रभावी रूप से बंद कर दिया है। 40 प्रतिशत से ज्यादा गैस आधारित बिजली के संयंत्र गैस की कमी के कारण बेकार पड़े है। यही स्थिति अधिकांश गैस आधारित खाद उत्पादन की है, तो फिर सवाल उठता है कि अतिरिक्त गैस कहां से आयेगी? दूसरी दुर्भाग्यपूर्ण सच्चाई यह है कि प्राकृतिक गैस (सीएनजी – अधिकांश मीथेन) या एलपीजी काफी महंगी हैं, और अधिकांश ऐसे परिवार जिनकी प्रति व्यक्ति दैनिक आमदनी रुपये 100 (मोटे तौर पर 1.5 डॉलर प्रति व्यक्ति दैनिक) से कम है, उनके लिए यह एक महंगी विलासिता है।

बायोमास से हर ग्रामीण घर में बिजली– भारतीय ग्रामीण परिवारों (और गरीब) की एक बड़ी संख्या, कुछ अनुमानों के अनुसार करीब 67 प्रतिशत, बहुत ही प्रदूशित ठोस ईंधन का उपयोग करती है, गरीब ज़्यादातर इकट्ठा किए हुए बायोमास का उपयोग करते हैं। बहुत से विकासशील देशों में ऐसे प्रोन्नत कुक–स्टोव के डिजाइन तैयार हुए हैं जिससे लकड़ी/बायोमास की आवश्यकता कम होती है। इससे ईंधन इकट्ठा करने के समय की भी बचत होती है। यह दो रसोई प्रदान करके धुंए को भी तेज़ी से कम करती है। इन नवोत्पादों को क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं एवं उपलब्ध

ईंधन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए सुधारा गया है, जिससे बड़े हिस्से की रसोई की जरूरतें पूरी हो सकती हैं। तकनीकी विकास एवं दामों में कमी करके वितरण वाली/एकल छोटे फोटो–वोल्टेज सोलर सिस्टम (बेहतर बिना रखरखाव वाली बैटरी युक्त) दो सीएफएल या एलइडी लैम्प या छोटी टीवी के लिए पर्याप्त बिजली पैदा कर सकती है। इससे हर गांव के घर में यहां तक कि सरकार की मदद से सबसे गरीब के घर में भी बिजली उपलब्ध हो सकती है। ये भारत की कुख्यात अविश्वसनीय ग्रामीण ग्रिडों पर भी निर्भर नहीं रहेगी, और इसमे बिजली का बिल या अन्य ईंधन का खर्च भी बार–बार नहीं करना होगा (पर कुछ सालों में बैटरी बदलनी होगी)। व्यावसायिक रूप से प्रयोग होने वाली चीनी प्रणाली भी भारतीय बाज़ार में पहले से ही बड़े स्तर पर आ गये हैं इसलिए भारतीय कार्यक्रमों के सफल नहीं होने का कोई कारण नज़र नहीं आता। कम दामों पर उपलब्ध उच्च आउटपुट वाले एलइडी लैंपों ने वितरित सोलर फोटो वोल्टेक की ग्रामीण घरों में पहुंचने की राह आसान बनाई है।

3. **फसल सुखाना**– ग्रामीण ऊर्जा की एक और तीसरी बड़ी आवश्यकता फसल सुखाना है। यहां भी सोलर ड्रायर ही सवोत्तम विकल्प है, (इस दिशा में कई स्वैच्छिक संगठनों, राज्य विज्ञान एवं तकनीक परिशदों ने अच्छा काम किया है) जो कि अभी अधिकांश गांवों में खुली धूप में फसल सुखाने के मुकाबले हल्की बारिश में भी फसलों को सूखा रखने में मदद करता है। आसानी से उपलब्ध स्थानीय सामाग्रियों का उपयोग करके कलाकारों द्वारा निर्मित कई साधारण डिज़ाइन स्थानीय निर्माताओं के लिए उपयुक्त हैं। कम कीमत पर उपलब्ध सोलर ड्रायरों के व्यापक पैमाने पर इस्तेमाल से कई खराब होने वाली फसलों का बेहतर भंडारण एवं उपयोग की अवधि बढ़ने का फायदा हो सकता है और साथ ही किसानों को उनके फसलों की बेहतर कीमत मिल सकती है।

4. **ठंडे क्षेत्रों में ताप ऊर्जा**– हालांकि यह सर्वव्यापी ग्रामीण आवश्यकता नहीं है, ठंडे/हिमालय के क्षेत्रों में यह आवश्यक है। यहां वर्तमान में अधिकांश लकड़ी का प्रयोग होता है, और कहीं–कहीं जिन्हें लकड़ी उपलब्ध नहीं हो पाती वहां बायोगैस का प्रयोग किया जाता है। दोनों में उपलब्धता और स्वास्थ्य की समस्या होती है (बंद घरों में बायोमास जलाने से कालिख होती है)। ऐसी जगहों पर भी सूर्य अपने आप में बड़ा ऊर्जा प्रदाता है और बहुत से साधारण एवं सुलभ पैसिव–सोलर ताप डिजाइन नये घरों एवं मौजूदा पुनः संयोजित घरों के लिए उपलब्ध हैं। स्थानीय सामाग्रियों का इस्तेमाल करके साधारण रोशनी में नवोत्पाद के ऐसे बहुत सारे अनुप्रयोग प्रदर्शित किये जा चुके हैं जिन्हें स्थानीय राजगीरों एवं कलाकारों से सीखा जाना चाहिए। अन्य गैर–ईंधन का विकल्प भू–तापीय ताप है। धरातल के कुछ मीटर नीचे वर्ष भर तापमान बहुत ज़्यादा बदलता नहीं है। इस प्रकार, धातु के ट्यूब को पानी या वायु में पर्याप्त लम्बाई में घुमाकर इससे गर्मी में ठण्डक और सर्दी में गर्म पैदा किया जा सकता है (इस तरह का प्रयोग केन्द्रीय एवं दक्षिण भारत के घरों में भी सेवारत हैं)। इसके लिए थोड़ी पम्पिंग ऊर्जा की आवश्यकता होगी, लेकिन ज़्यादातर गर्मी पृथ्वी की अपनी गर्मी से प्रदान की जाएगी जो कि लगातार उपलब्ध होती है (सोलर या वायु ऊर्जा से भिन्न जो कि पारी–पारी से आती है)।

5. **लघु, गैर–विध्नकारी जलीय ऊर्जा**– बहुत से पहाड़ी या पर्वतीय क्षेत्र ऐसे हैं जहां बहती धाराएं एवं छोटी–छोटी नदियां हैं। विश्व के कई हिस्सो में वास्तविक रन–ऑफ–दि–रिवर पनबिजली परियोजनाएं डिजाइन की गई एवं संचालित हैं। धारा के बीच टरबाइन प्रणाली, धीमें बहने वाली धाराओं के लिए फ्लैट–फोयल प्रणाली – ये सभी धाराओं के बगल में रहने वाले ग्रामीण समुदायों के लिए लघु स्तर पर स्वच्छ बिजली उत्पादन करने में सक्षम हैं। पनचक्की या ''घराट'' जो कि हमारे उत्तरी पर्वतीय क्षेत्रों में पारंपरिक रूप से प्रयोग किये जाते हैं, दिखाते हैं कि बहती धाराओं/नदियों को नष्ट किये बगैर जलीय ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती है। आधुनिक हाइड्रो–डाइनामिक डिजाइन बिजली आउटपुट को सुधार सकता है और उपयोग कई गुना बढ़ा सकता है, ये भी स्थानीय समुदायों के लिए बिजली उत्पादन कर सकते हैं। यहां तक कि छोटी नदियां इन–स्ट्रीम टरबाइन सिस्टम के लिए उपयुक्त होती हैं जो कि काफी मात्रा में कई गांवों को बिजली प्रदान कर सकती हैं।

6. **छोटे ग्रामीण उद्योग/उद्यमों के लिए ताप एवं बिजली**– जैसा कि यह स्पष्ट है कि गांवों की बेहतरी के लिए बिना बड़े पैमानों के उद्योंगों पर हमला किए या हानि पहुंचाए स्थानीय उद्यमिता के माध्यम से स्थानीय कृषि/अन्य संसाधनों के महत्व को बढ़ाने की आवश्यकता है। इसमें बिजली एवं ताप कम मात्रा में लगेगा। बहुत सी औद्योगिक प्रक्रियाओं में 300 सेंटीग्रेट तक के ताप की आवश्यकता पड़ती है जिसे साधारण सोलर संग्राहक/संकेन्द्रक से प्राप्त किया जा सकता है। कम कीमत वाले रिफ्लेक्टिव सोलर कुकर जो कि दशकों से मानक हैं और जो एक किलोवॉट से अधिक ऊर्जा उत्पादन करते हैं, छोटे प्लास्टिक उद्योग, मोम/पैराफिन आदि जैसे छोटे लघु उद्योगों के लिए पर्याप्त हैं। छोटे पैमाने के कृषि/बागवानी जैसे कृषि आधारित उद्योग कुछ किलोवॉट की कम ताप वाली ऊर्जा से चलते हैं। वह ऊर्जा नये सोलर एअर या फ्लुइड हीटरों में साधारण सुधार से प्राप्त की जा सकती है। इनमें से ज्यादातर तकनीकें स्थानीय दक्ष लोगों द्वारा – उपयुक्त प्रशिक्षण के साथ– निर्माण

एवं रखरखाव के वास्ते अपनाने के लिए उपयुक्त हैं। थोड़ी अतिरिक्त बिजली की आवश्यकता को या तो छोटे पनबिजली संयंत्रों या छत के ऊपर सोलर फोटो वोल्टेक सिस्टम से प्राप्त की जा सकती है।

इन अवधारणाओं/प्रणालियों का सबसे बड़ा फायदा एवं प्रतिमान बदलने वाली विशेषता यह है कि ऊर्जा की उपलब्धता एवं नियंत्रण स्थानीय स्तर पर रहता है, और थोड़ा प्रशिक्षण के जरिये क्षमता वर्धन करके व निर्माण एवं रखरखाव की क्षमता मे वृधि करके बड़े स्तर पर स्थानीय ऊर्जा उद्योग विकसित किया जा सकता है। और इस उद्यम के इर्द–गिर्द स्थानीय अर्थव्यवस्था को नया जीवन दिया जा सकता है। बड़े स्तर पर, केन्द्रित ऊर्जा उद्योग – जिनका नियंत्रण बड़े पूंजीपतियों के हाथो में होता है, और स्थानीय अर्थव्यवस्था कुछ हाथों तक सीमित हो जाती है। हमारे भावी ग्रामीण ऊर्जा प्रणाली का डिजाइन करते समय हमें संसाधन से आगे भी सोचने की ज़रूरत है (यद्यपि वह महत्वपूर्ण है) और यह भी देखने की ज़रूरत है कि ऊर्जा प्रणालियों को कौन नियन्त्रित करता है और इसके निष्कर्षण, रूपांतरण और उपयोग से कौन फायदा उठाता है। यह छोटा लेख उन कई संभावनाओं की ओर संकेत करता है जहां सामान्य गांव के लोग अपनी ऊर्जा के भविष्य को प्रकृति के अनुकूल तरीके से नियन्त्रित कर सकते हैं।

ऊर्जा के विभिन्न उपयोग एवं स्रोत

ऊर्जा उपयोग	प्राथमिक स्रोत	कुछ प्रभाव / उपयुक्तता
बिजली उत्पादन	कोयला (ताप बिजली संयंत्र) तेल (कम संख्या में)	भारी, स्थानीय एवं क्षेत्रीय – कण, अम्लीय ऑक्साइड युक्त वायु एवं जल प्रदूषण; बड़े स्तर पर जलवायु परिवर्तन अंशदाता; खनन का विनाशकारी असर
	पारंपरिक प्राकृतिक गैस	मिथेन रिसाव – जलवायु परिवर्तन, भूजल प्रदूषण
	शेल गैस	मिथेन रिसाव – जलवायु परिवर्तन, मृदा प्रदूषण
	वायु	कम असर – शोर, पक्षियों का जीवन प्रभावित होता है
	सौर फोटोवोल्टिक संकेंद्रित सौर ताप	बहुत कम असर होता है, लेकिन इसे बहुत ज़्यादा जगह की जरूरत होती है (यदि छत के ऊपर न लगा हो तो), पानी के अभाव वाले क्षेत्र सबसे अच्छे स्थल होते हैं,

		स्वतंत्र स्तर, स्थापन एवं नियंत्रण आसान; फिलहाल प्रतियूनिट लागत कुछ ज्यादा लेकिन तेज़ी से घट रही है
	बायोमास गैसीफायर	यदि ऊर्जा बायोमास टिकाऊ तरीके से पैदा किया जाता है तो ग्रामीण इलाकों में अच्छी संभावना; कर्नाटक के कुछ ग्रामीण इलाकों में आईआईएससी के 'आस्ट्रा' केन्द्र ने पायलट प्रयोगों का आयोजन किया; प्रमुख चुनौतियां हैं: सामुदायिक स्तर पर बायोमास रोपण का प्रबंधन एवं बिजली उत्पादन व वितरण, और खाद्य फसल की खेती समाप्ति के भय को रोकना;
	भू–तापीय ऊष्मा	सील की सीमा हैः भूगर्भीय गड़बड़ी का कुछ जोखिम, स्थानीय जल प्रदूषण की संभावना
	समुद्री ताप ज्वार लहर ऊर्जा	बहुत अच्छी क्षमता–लेकिन सभी प्रायोगिक चरण में है। एक ही जगह पर ज़्यादा ध्यान केन्द्रित नहीं किया जा सकता है।
औद्योगिक ऊष्मा	कोयला	प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन; सस्ती क्योंकि सरकार छिपे तरीके से अनुदान देती है
	तेल(पेट्रोलआधारित प्राकृतिक गैस)	मंहगा, वायु प्रदूषण, जलवायु को खतरा
	केन्द्रित सौर ऊष्मा	कम प्रदूषण, संभावित कम लागत लेकिन अभी भी विकास के चरण में
परिवहन	तेल (पेट्रोल आधारित प्राकृतिक गैस)	तेज़ी से महंगा होता हुआ और एक सीमा में होने के कारण दुर्लभ; बहुत प्रदूषणकारी, हालांकि गैस से थोड़ा कम प्रदूषण
	बिजली चालित वाहन	अधिकांश बिजली गंदे स्रोत से आती है; बैटरियां: प्रदूषण के नियमित स्रोत; सीमित श्रेणी एवं उत्पादन लागत अधिक; सुधार के साथ सार्वजनिक परिवहन की ओर झुकाव;

		भविष्य का विकल्प; 'सामान्य' गति की श्रेणी में बिजली के रेल कुशल एवं किफायती हैं
	हाइब्रिड इलेक्ट्रिक वाहन	ब्रेक लगाने/मंदन ऊर्जा से आंतरिक रूप से उत्पन्न बिजली; पेट्रोलियम ईंधन की खपत लागभग आधे से कम कर देता है; पूर्ण पेट्रोलियम वाहन के मुकाबले शुरूआती लागत ज़्यादा होती है, इसलिए जापान
	हाइब्रिड इलेक्ट्रिक वाहन	ब्रेक लगाने/मंदन ऊर्जा से आंतरिक रूप से उत्पन्न बिजली; पेट्रोलियम ईंधन की खपत लागभग आधे से कम कर देता है; पूर्ण पेट्रोलियम वाहन के मुकाबले शुरूआती लागत ज़्यादा होती है, इसलिए जापान एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में सरकारें उपभोक्ताओं को सब्सिडी देती हैं; अभी भी नयी तकनीक है, इसलिए सरकारों को ऐसी सब्सिडी देनी चाहिए; इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिक्रिया से उत्पादित बिजली; हाइड्रोजन के स्रोत के उत्पादन के अलावा कोई प्रदूषण नहीं, जैसे प्राकृतिक गैस; तकनीक अभी भी अनुसंधान के दौर में; आशाजनक भावी प्रौद्योगिकी जिसकी अगले 10–20 सालों में बिजली एवं परिवहन दोनों क्षेत्रों में घुसने की संभावना है;
	ईंधन सेल वाहन	बायोईंधन युक्त पेट्रोलियम ईंधन का प्रयोग कुछ देशों, विशेषकर ब्राज़ील, में सफलतापूर्वक किया गया; जबकि चुनौती यह है कि खाद्य फसलों की खेती को नुकसान पहुंचाए बग़ैर बायोईंधन की खेती कैसे की जाए; खाद्य सुरक्षा में बायोईंधन के प्रतिकूल असरों के बारे में गंभीर चिंताएं ज़ाहिर की गयी हैं;
	वायु ऊर्जा से चलने वाले पानी के जहाज़	प्रदर्शित, कुशल एवं आशाजनक

घरेलू ऊष्मा / खाना पकाना	प्राकृतिक गैस	सीमित आपूर्ति; कम प्रदूषणकारी
	तेल (मिट्टी तेल या पेट्रोल आधारित)	दुर्लभ, प्रदूषणकारी, महंगा
	बिजली	बिजली अधिकांश गंदे कोयले पर आधारित; तुलनात्मक रूप से महंगा; कुल ऊर्जा उपयोग में अक्षम
	बायो गैस	गावों के लिए प्रभावी; ज़्यादा स्थानीय नियंत्रण
	बायो–मास	कण युक्त उच्च प्रदूषण – स्वास्थ्य पर असर लेकिन फिर भी सुलभ एवं सस्ती; सुधार की बहुत गुंजाइश
	सौर रसोई	किफायती लेकिन बाहरी जरूरतों के लिए सीमित; सांस्कृतिक अनुकूलन की समस्या से निपटने की ज़रूरत; कुशल; सूर्य के इलाकों एवं समय की सीमा
	सौर अंतरिक्ष बिजली (सक्रिय एवं निष्क्रिय)	प्रभावी; शुरूआती लागत अधिक किन्तु चालू लागत कम; बढ़ावा देने की ज़रूरत
	सौर तापीय पानी गर्म करना	लागत प्रभावी एवं विकेन्द्रित स्थापन एवं इस्तेमाल से टिकाऊ तकनीक; भारत के शहरी एवं अर्द्ध–शहरी घरों में सफलतापूर्वक स्थापन किया गया है; सरकार एवं एनजीओ द्वारा बढ़ावा दिये जाने की ज़रूरत;
औद्योगिक ऊर्जा की ज़रूरतें	कोयला, गैस, तेल, बिजली;	जैसे पहले ज़िक्र किया गया
ताप एवं बिजली	सौर ऊष्मा, नवीनेय ऊर्जा, बिजली	

ज़्यादा से ज़्यादा बिजली के लिए भागम–भाग कल्पना पर आधारित

किसी भी समाज को अपने समस्त नागरिकों को सम्मानपूर्वक जीवन एवं आजीविका के विकल्पों सहित ऊर्जा के न्यूनतम स्तर को प्रदान करने के लिए बहुत सारी ऊर्जा की ज़रूरत होती है। भारत भी इसका अपवाद नहीं है। इस मामले में, भारत लगातार विफल रहा है। भारत में अब भी 30 करोड़ लोग बगैर बिजली के रह रहे हैं जबकि अन्य 40 करोड़ लोगों को काफी कम एवं अनियमित आपूर्ति हो रही है। यह विश्व के औसत के मुकाबले भी काफी कम है, जहां विश्व की कुल 7 अरब आबादी में से करीब 1.20 अरब लोग बगैर बिजली सेवाओं के रहते हैं।

यह ध्यान रखा जाए कि बिजली के तौर पर जो ऊर्जा हम खपत करते हैं वह समस्त स्वरूपों में कुल ऊर्जा के खपत का मात्र छोटा सा हिस्सा है (मोटे तौर पर भारत में 15 प्रतिशत)। इस तरह, सिर्फ बिजली की क्षमता पर अधिकांश या उसे बढ़ाने पर ज़्यादा ध्यान देने से – जैसा कि भारत सरकार कर रही है – अन्य कई ज़रूरतों एवं संभावनाओं को कम आंका जाता है। इसके अलावा बिजली अक्सर ऊर्जा उत्पादन का महंगा एवं पूंजी स्वरूप है। इसे पूंजी केंद्रित ज़्यादा देखा जाता है कुछ अपवादों को छोड़कर। इसलिये हमें जहां भी संभव हो ज़्यादा आसानी से नियंत्रण मुक्त एवं स्थानीय स्तर पर सस्ती गैर–बिजली ऊर्जा सेवाओं की ओर ध्यान देने की ज़रूरत है।

इन तथ्यों के बावजूद, चूंकि सबसे अधिक संख्या में बड़ी ऊर्जा परियोजनाएं एवं उन विनाशकारी परियोजनाओं के खिलाफ जन संघर्ष – बिजली परियोजनाओं के इर्द–गिर्द केन्द्रित हैं (कोयला खनन एवं बिजली संयंत्र, बड़ी पनबिजली परियोजनाएं एवं परमाणु), इस तथ्य के बावजूद कि भारत सरकार बिजली की स्थापित क्षमता को तेजी से और बहुज ज्यादा बढ़ाने पर जोर दे रही है, हमें इस ऊर्जा के इस अहम स्वरूप के उत्पादन एवं इस्तेमाल पर ध्यान देना चाहिए, और कि क्या हमें वास्तव में इतना व्यापक बिजली क्षमता की जरूरत है जितना पेश किया जा रहा है। भारत के पास 2,80,000 मेगावाट की स्थापित क्षमता वर्ष 2015 के अंत तक थी, जबकि एकीकृत ऊर्जा नीति एवं इसके बाद के अलग–अलग अनुमान वर्ष 2032 तक (17वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक) 9,00,000 मेगावाट से अधिक की मांग अनुमान लगाया हैं। इनमें 4,00,000 मेगावाट अतिरिक्त कोयला आधारित क्षमता (जबकि वर्तमान में यह 1,74,000 मेगावाट है), 1,10,000 मेगावाट अतिरिक्त बड़ी पनबिजली (जबकि आज 42,000 मेगावाट है), करीब 58,000 मेगावाट अतिरिक्त परमाणु बिजली (भारत में 45 साल के व्यावसायिक परमाणु बिजली के बाद – हमारे पास 5,700 मेगावाट की क्षमता है), करीब 22,000 मेगावाट सौर बिजली और 45,000 मेगावाट बायोमास आधारित बिजली (आज के सबसे बड़े नवीन्य क्षमता से कहीं अधिक) एवं बाकी वायु एवं अन्य स्रोत शामिल हैं। हाल ही मे सरकार सौर ऊर्जा से 100000 मेगावाट और पवन ऊर्जा से 60000 मेगावाट बिजली उत्पादन क्षमता 2022 तक स्थापित करने की बात कर रही है। 2015 के अंत तक सिर्फ 5000 मेगावाट सौर ऊर्जा क्षमता ही बना पाये है, जबकि पवन ऊर्जा संयत्रं तेजी से बढते हुये 25000 मेगावाट पार कर चुके है।

ये विशाल 'मांग पूर्वानुमान' कुछ मान्यताओं पर आधारित हैं – कि

क) 8.5–9 प्रतिशत की सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि की दर जारी रहेगी (पहले ही ठप्प हो चुकी);

ख) सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर अर्थव्यवस्था के अनुरूप ऊर्जा इनपुट के साथ करीब से जुड़ी होती है;

ग) बड़े पैमाने पर शहरीकरण एवं औद्योगीकरण और ज़्यादा बढ़ती दर से जारी रहेगा।

कई अध्ययनों में यह दिखाया जा चुका है कि स्रोत की बाधाओं से अलग, ऊर्जा (और अधिक प्रमुखता से बिजली की खपत) 1) आर्थिक सम्पन्नता, एवं 2) शहरीकरण के स्तर के साथ बढ़ती है। इनके आधार पर, हमें विवेकशील तरीके से पड़ताल करने की ज़रूरत है कि भारत को 2032 तक (17वीं योजना अवधि के अंत तक) कितनी बिजली क्षमता की ज़रूरत हो सकती है।

हम पहले ही देख चुके हैं कि 8.5 प्रतिशत से अधिक जीडीपी का पूर्वानुमान भारत में तो कायम नहीं है, और हमारा जीडीपी करीब 6.7 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। दुनिया की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं की संकटपूर्ण स्थिति, और उनके द्वारा सामना किये जाने वाले मूलभूत समस्याओं को देखते हुए, इसकी संभावना बहुत कम है कि 2005–2008 की अवधि वाली उच्च जीडीपी वृद्धि वापस पाई जा सके। इससे बड़ी बात यह कि इस वृद्धि को आगे बढ़ाने के लिए बिजली की आपूर्ति में बड़ी वृद्धि करने की दूसरी मान्यता भी भारत के सम्बन्ध में खरी नहीं उतरती है। चीन (जहां जीडीपी की वृद्धि अधिकांश ऊर्जा–गहन निर्माणों द्वारा तय होती है) के विपरीत भारत की वृद्धि कम ऊर्जा–गहन सेवाओं के क्षेत्र पर आधारित है। कृषि क्षेत्र वह दूसरा क्षेत्र है जो कि थोड़ी बहुत अतिरिक्त ऊर्जा एवं सही नीतियों से बहुत तेज़ी से आगे बढ़ सकता है। तेज़ी से बढ़ते शहरीकरण एवं औद्योगीकरण के जारी रहने की तीसरी मान्यता पर भी तेज़ी से सवाल उठ रहे हैं और उनका विरोध हो रहा है, क्योंकि करोड़ों लोगों को अपने घरों एवं खेतों से निकाल बाहर किया जा रहा है। इस तरह, उच्च बिजली मांग के पीछे ये तीनों मान्यताएं खरी उतरती नहीं दिखतीं, कम से कम उस पैमाने पर तो नहीं जैसे कल्पना की जा रही है।

अब, हम भारत के कुछ वास्तविक विशिष्ट आंकड़ों के साथ एक बहुत सरल गणना करते हैं। जैसा कि पहले बताया गया – शहरीकरण एवं आय का स्तर उच्च होने से ऊर्जा एवं बिजली की मांग की कुल मात्रा बढ़ती है, साथ ही कुल ऊर्जा खपत में बिजली का प्रतिशत भी बढ़ता है। दिल्ली देश का सबसे शहरीकृत राज्य है जहां 97.5 प्रतिशत शहरी आबादी है। दिल्ली के ग्रामीण क्षेत्र मे भी बिजली की खपत ज़्यादा है। प्रति व्यक्ति आय के मामले में यह दूसरा सबसे धनी राज्य है (गोवा के बाद), जहां प्रति व्यक्ति औसत आय रुपये 2,12,000 प्रति वर्ष है (यदि आप इसे 4.5, औसत परिवार आकार, से गुना करें तो परिवार की औसतन आय अद्‌भुत रूप से रुपये 9,50,000 प्रति वर्ष से अधिक होती है)। बेशक दिल्ली के अन्दर ही काफी असमानता है, लेकिन औसत रूप से, दिल्ली ऊर्जा और सामग्री का एक बड़ा उपभोक्ता है। दिल्ली की प्रति व्यक्ति बिजली खपत (सभी उपभोग – व्यावसायिक, औद्योगिक, आवासीय, परिवहन) करीब 1850 यूनिट (किलोवॉट घंटे) प्रति वर्ष है, जबकि भारत की औसत खपत करीब 870 यूनिट है, जिसका मतलब दिल्ली के 1.7 करोड़ नागरिकों के लिए करीब 5500 मेगावॉट बिजली की मांग होगी (भारत की आबादी मोटे तौर पर इसकी 7.4 गुणा है)।

इसमें कोई शक नहीं कि भारत के बारे में (किसी भी कल्पना से) 97 प्रतिशत शहरीकरण होने की कल्पना नहीं की जा सकती (आज यह स्तर 31 प्रतिशत है, और यहां तक कि 50 प्रतिशत शहरीकरण से आजीविका एवं रोजगार और कई प्रकार के ज़्यादा गंभीर प्रदूषणों सहित कृषि में तबाही आ जाएगी)। आय के मामले में, मान लेते हैं कि 2032 तक यह वांछित है, पूरा भारत उस उच्च स्तर पर होगा जिस स्तर पर दिल्ली आज है। यहां मैं यह नहीं मान रहा हूं कि आबादी बढ़ने की रफ्तार कम हो जाएगी, उनकी ऊर्जा की मांग एवं उपयोग के बारे में बहुत सावधान रहना होगा – हालांकि ये सभी बहुत वांछनीय उद्देश्य हैं, और उस समाज के लिए ज़रूरी है जो कि काफी मात्रा में जलवायु परिवर्तन और स्थानीय जल व वायु प्रदूषण के प्रभावों का सामना कर रहा है। फिर भी, सिर्फ गणना के लिये मान लेते हैं कि यद्यपि कुछ व्यावहारिक मजबूरियों के साथ, मध्यम वर्ग की आकांक्षाएं जारी रहेंगी।

इस आधार पर मान लेते हैं कि एक ''औसत भारतीय'' की आरामदेह और बेहतर ज़िंदगी के लिए इस समय वांछित बिजली उपभोग 2032 तक प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 1500 यूनिट होनी चाहिए। यदि दिल्ली इस दर पर उपभोग करता है तो, उसकी बिजली की ''मांग'' 1500 / 1850 गुणा 5500 = 4460 मेगावॉट, या कह सकते हैं 4500 मेगावाट होगी। इस दर से बिजली उपभोग करने पर, पूरे देश को करीब 4500 गुणा 74 = 333,000 मेगावॉट की क्षमता ज़रूरत साधारण होगी (आरामदेह ज़िंदगी के लिए, न कि संयुक्त राज्य अमेरिका की तरह सुंदरजीवन शैली के लिए)। कृप्या ध्यान दें, जब हमने सकल बिजली मांग स्तर को लिया तो सभी बरबादियों, बहु–उपयोग आदि शामिल किये गये हैं। इस तरह करीब 1,00,000 मेगावाट की अतिरिक्त क्षमता की ज़रूरत को छोड़ दिया गया है, जो कि वायु एवं सौर के बेहतर व सस्ते तरीके से हासिल किया जा सकता है। लेकिन यह 2032 में बढ़ी हुई आबादी का ध्यान कैसे रखता है? भारत सरकार एवं उद्योग ने पहले ही प्रतिबद्धता जतायी है (अपने आर्थिक लाभ के लिए) कि 20 साल से कम की अवधि में अर्थव्यवस्था की ऊर्जा तीव्रता में करीब 25 प्रतिशत तक की कमी की जाएगी। उस समय की आबादी की वृद्धि 40 प्रतिशत के आसपास अनुमान की गयी है। इस तरह, 2032 तक भारत को आज की क्षमता

से करीब 1,50,000 मेगावॉट के आसपास आंतरिक बिजली क्षमता की ज़रूरत होगी। यह अवधि ऐसी भी है जिसमें कोयला आधारित एवं परमाणु बिजली दोनों ही ज़्यादा महंगी हो रही हैं (यहां तक कि उनके व्यापक प्रदूषण को एक तरफ छोड़ दें तो भी), और सौर एवं वायु ऊर्जा की लागत घट रही है। इस तरह, यदि आज कोयला आधारित बिजली थोड़ी बहुत सस्ती है, यदि हम बड़े कोयला आधारित क्षमता को अपनाते हैं तो हम खुद को ज्यादा महंगी और जलवायु एवं पर्यावरण के लिए खतरनाक कोयला एवं परमाणु क्षमता (इन संयंत्रों की आयु 40 वर्ष या ज़्यादा होती है) के अंतर्गत बंद कर देंगे, जबकि आने वाले 5–10 साल में कम प्रदूषणकारी सस्ती नवीन्य ऊर्जा उपलब्ध होगी।

यह पद्धति बहुत सरल तथा आम लोगों द्वारा अपनाने और समझने में आसान है, लेकिन यहां तक कि अधिक जटिल पद्धतियां ज़्यादा विविधता नहीं दिखाती हैं। इस तरह हम देख सकते हैं कि एकीकृत ऊर्जा नीति के काल्पनिक अनुमान एवं उस पर आधारित सरकार की व्यापक संसाधन हड़प एवं निजीकरण की सोच वास्तव में इसी अस्थिर आधार पर टिकी है। आशा है कि जन आंदोलन, प्रगतिशील नागरिक समाज संगठन एवं पर्यावरण पर विवेकपूर्ण विचार करने वाले लोग 'विकास' के नाम पर व्यापक स्तर पर विनाशकारी बहुत सारी बिजली परियोजनाओं निरर्थक और अप्रिय कोलाहल का मुकाबला करने के लिए इसे उपयोगी पाएंगे।

सौम्य दत्ता, भारत ज्ञान विज्ञान जत्था एवं बियॉण्ड कोपेनहगेन कलेक्टिव

भाग 3

भारत मे काला सोना और उसके उपयोग

कोयला क्या है ?

करोड़ो साल पहले जब धरती मे जंगल धीरे धीरे मिट्टी के नीचे दब गया, सारे पेड़ पौधे –मिट्टी के नीचे की गर्मी और दबाब के चलते उनका पानी और बाकी अवशेष धीरे – धीरे खत्म हो गये ओर वो ठोस काला पत्थर का रूप लेते गया। यह पहले पीट, उसके बाद लिग्नाइट, और बिट्यूमिनस कोयला और सबसे ठोस आंत्रेसाइट कोयला मे परिवर्तित होता गया। इसका मतलब यह है कि खदान से जितना कोयला निकाला जाता है वो सब सूर्य से पहले ऊर्जा पाया है और वायुमंडल से कार्बन डाइआक्साइड लेकर कार्बन अपने अंदर जमा किया।

कोयले का उपयोग कब से ज़्यादा हो रहा है ?

दुनिया मे कोयला का छूट–पुट स्तर पर उपयोग तो हज़ारो वर्षों से है, लेकिन लगभग 200–250 वर्षों से भाप इंजन के इस्तेमाल के साथ ही इसका उपयोग बहुत अधिक होने लगा। इसके पहले दुनिया के प्रधान ऊर्जा स्रोत पषुषक्ति लकड़ी और हवा आदि थे। भाप इंजन के लिए सबसे अधिक ऊर्जा की ज़रूरत कोयला ने पूरी की, एक किलो कोयला सूखा लकडी से दुगुना ऊर्जा देता है। कोयला का इस्तेमाल भाप इंजन के प्रसार में भी बहुत सहायक साबित हुआ। इस तरह कोयला और भाप इंजन एक दूसरे के परिपूरक बन गये। इन दोनों के चलते दुनिया मे औद्योगिक क्रांति का दौर शुरू हुआ। जो अब दुनिया में सभी जीव जन्तु और मानव समाज, पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधन के लिए खतरे की घंटी बन चुका है।

भारत मे कोयला का उपयोग कब शुरू हुआ?

मध्य भारत के आदिवासी इलाको में कोयले का छोटे स्तर पर उपयोग काफी पुराना है, लेकिन औद्योगिक स्तर पर कोयले का खनन और उपयोग भारत में सन 1774 मे शुरू हुआ। इसके लगभग 40 साल बाद बंगाल के रानीगंज इलाके में बड़ी मात्रा मे कोयला खदान शुरू हुआ और भारत में ऊर्जा के लिये इसका उपयोग दिखने लगा। अब तक भारत में ऊर्जा का एक बड़ा हिस्सा जैविक पदार्थ (बायो–मास) से आता था। इसके लगभग 110 बरस बाद आज़ादी के समय भारत का कोयला उत्पादन लगभग 3 करोड़ टन था, जो तेज़ी से बढ़ते हुए 2015 तक 62 करोड़ टन तक पहुंच गया और कोयले की पूरी खपत इससे भी ज़्यादा है, जो आज के दिन 78 करोड़ टन के आसपास है।

भारत मे कितनी कोयला है?

अलग अलग हिसाबों से देश मे कोयले की उपलब्धता के बारे मे भिन्न– भिन्न जानकारी मिलती है। कोयले की उपलब्ध्ता खदान की गहराई पर भी निर्भर करता है। भारत का जियोलॉजिकल सर्वे संस्थान के अनुसार पूरे भारत के सभी कोयला खदान इलाकों में ऊपर से 600 मीटर तक की गहराई में 40 से 110 बिलियन टन (4000 से 11000 करोड टन) कोयला मिलने का सबूत मिला।

कोयला का सबसे बड़ा उपयोग किसमें होता है ?

भारत का पूरा ऊर्जा खपत का लगभग 50 प्रतिशत ऊर्जा कोयले से आती है। आज बिजली उत्पादन में कोयले का सबसे ज़्यादा खपत है। इसके बाद स्टील और सीमेंट बनाने में इसकी खपत है। भारत में जितनी बिजली का उत्पादन होता है उसका लगभग 67 प्रतिशत कोयला बिजली घर से आता है। बाक़ी कुछ उद्योग में भी कोयले का भारी मात्रा में उपयोग है, ताप ऊर्जा के लिए सबसे अच्छी गुणवत्ता का कोयला उपयोग नहीं होता है इसलिये आज भारत विदेशों से कोयले का आयात भी कर रहा है, जो की इंडोनेशिया, ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों से आता है, जो देशी कोयला के मुकाबले बहुत ज़्यादा खर्चीला है।

कोयला के प्रभाव –

यह बात सच है कि कोयला मनुष्य को आगे बढ़ाने मे मददगार रहा है और कुछ शोधकर्ताओं ने कहा कि कोयला दुनिया से दास प्रथा हटाने में भी सहायक साबित हुआ है। उद्योगों में मनुष्य की कमर तोड़ मेहनत को कम करने में भी कोयले का योगदान है और यह भी सच है कि दुनिया में आज भी बिजली उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा कोयला बिजली घरो से आता है। बिजली की ज़रूरत तो सबको है, अमीर हो या गरीब। लेकिन कोयला खनन और जलाने की प्रकिया से बहुत सारी समस्याए भी उत्पन्न होती है। कोयला सिर्फ जलने वाला कार्बन ही नही है, बल्कि इसमे बहुत प्रदूषण करने वाले तत्व भी हैं, जिसमें भारी धातु, मर्करी, रेडियो धर्मी युरेनीयम और थोरियम, आर्सेनिक, सल्फर, जैसे ज़हरीले तत्त्व भी शामिल हैं।

कोयला खदानें ज़्यादा जंगल वाले इलाकों में ही हैं। इससे दुनिया और भारत मे जंगल का विनाश बहुत हुआ है। खदानों में बहुत पानी की ज़रूरत होती है और इससे छोड़ा गया पानी बड़ी मात्रा में प्रदुषण फैलाता है जो आसपास में ज़मीनी जल को भी प्रदूशित करता है। कोयला खदानों ने खेती योग्य भूमि को भी बड़ी मात्रा में अधिग्रहित किया। खदानों के आसपास की खेती की ज़मीन भी प्रदूषण के चलते अपनी उर्वरता काफी हद तक खो देती

है। बिजली गावों मे पहुंच तो गयी है लेकिन इसे जो खरीद सकता है उसी को बिजली मिलती है। गरीब किसान और आदिवासी इससे विस्थापन, प्रदूषण की मार झेलता है। कोयला जलाने से ऊर्जा का उत्पादन तो होता है लेकिन बहुत सारे तत्त्व जो जलते नहीं और उड़ती हुई राख के साथ और ज़मीन पर बिखरी राख के तहत हवा और पानी को बड़े पैमाने पर प्रदूषित करती है। इसमें ऐसे ज़हरीले तत्त्व है जो मनुष्य तथा पशुओं में खतरनाक बीमारियां पैदा करती हैं। इसमें सांस की बीमारियां, केन्सर, टीबी, दिमागी बिमारिया (सबसे ज़्यादा मरकरी से), रेडियो धर्मिता, संक्रामक बीमारियां इत्यादि शामील हैं। ये भी ज़्यादा उन्हीं लोगों को झेलना पड़ता है जो खदान, बिजली घर से पास हैं या विस्थापित हैं, और जिनके पास बिजली को खरीदने का पैसा नही है।

> "सिगरौली मे सांस की बीमारिया, केन्सर, टीबी, दिमागी बीमारियां (सबसे ज़्यादा मरकरी से), रेडियो धर्मिता, संक्रांत बीमारिया और दूशित पानी पीने से जो बिमारियां होती है उन मरीज़ो की संख्या ज़िला अस्पताल मे काफी बढ़ गई है ऐसा डॉ आर बी सिंग ज़िला अस्पताल सिगरौली कहते हैं।"

कोयले से ताप बिजली बनाने मे एक बड़ा नुकसान है पानी का, क्योंकि कोयले बिजली घर को पानी की बहुत मात्रा चाहिये। एक मेगावॉट बिजली बनाने के लिए 5 से 7 घन मीटर पानी की खपत होती है, और हमारे जैसे देश में जहां बहुत ऐसे इलाके हैं जहां पानी की कमी अभी से दिखाई पड़ रही है। नया कोयला बिजली घर इस संकट को और गहरा बना देगा। सिर्फ इतना ही नहीं, जब कोयले को ठंडा करने वाला पानी खदानों से छोड़ा जाता है तो वह भी आस पास के जल स्रोतों को नष्ट कर देता है। ये गरम पानी के चलते नदी, तालाब, और समुद्र किनारे के पानी मे रहने वाले प्राणी भी तबाह हो रहे हैं।

कोई सही हिसाब सरकार के पास नहीं है, लेकिन अनुमान है कि ऐसी बड़ी परियोजनाओं से देश में पिछले 50 सालो में 70 से 80 लाख लोग विस्थापित किये जा चुके हैं और उसमें एक बड़ा हिस्सा आदिवासियों का है। लेकिन इसका लाभ ज़्यादा शहरी और अमीर वर्ग को ही मिला है। जो इस एक आंकडें से देख सकते हैं 1990–91 मे देश में सिर्फ 62–63000 मेगावॉट बिजली संयन्त्र मौजूद था। जबकि देश के 54 प्रतिशत लोगों के पास बिजली नहीं थी। वर्ष 2001 मे 104000 मेगावॉट का संयन्त्र था फिर भी 42 प्रतिशत लोागों के पास बिजली नहीं थी और आज 2015–16 मे देश में बिजली उत्पादन संयन्त्र की मात्रा 284303 मेगावॉट तक पहुंच गयी जो की बीस साल पहले के मुकाबले चार गुना है, लेकिन बिजली ना मिलने वालों की संख्या में सिर्फ 20 प्रतिशत ही गिरावट आई। उसमें भी 18 प्रतिशत के पास बिजली खरीदने की क्षमता नही है। जबकि पूर्व के योजना आयोग में चर्चा की गई थी कि सभी गरीबों (बीपीएल के नीचें) को सब्सिडी वाली बिजली मुफ्त मे दी जायेगी। तो ये बात साफ है कि जितना ज़्यादा बिजली संयन्त्र बन रहा है उतना ही गरीबों को मार झेलना पड़ रहा है। जबकि बिजली उनके घरो में कम ही पहुंची है। ये सब मेगा बिजली संयंत्र बड़ी खपत वाली उपभोक्ता के लिए एकदम सही है।

मौसम परिवर्तन का संकट––

पिछले 20 सालो में पूरी दुनिया इस खतरे से परिचित हो गयी है और इसे एक बीसवी शताब्दी की सबसे बड़ी चुनौती मान लिया है। ये संकट पैदा करने में औद्योगिक क्रांति और कोयला (साथ में पेट्रोलियम भी) का सबसे बड़ा योगदान है। पूरी धरती का कार्बन चक्र को धस्त करने में कोयला, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस की भूमिका है। मौसम का गैर

परंपरागत बदलने से करोड़ों किसानों को खेती की हानि हो रही है। लाखों लोगों को कई खतरों और मौत का सामना करना पड़ रहा है। पिछले दशक में ये इतनी ज़्यादा हुई कि विश्व मौसम संस्थान 2001 से 2010 के दशक को क्लाइमेट एक्सट्रीम के दशक का नाम देने को मजबूर हो गया, और कोयला से ये कार्बन डाईआक्साइड पैदा करके मौसम में खतरनाक बदलावों का खतरा सबसे ज़्यादा हो रहा है।

इस वर्ष दुनिया के वायुमंडल में कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा 400 भाग (हर 10 लाख भाग में) तक पहुंच गया और वैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुसार ये 450 तक पहुंच जाएगा तो मौसम में प्रलय वाले बदलाव और ज़्यादा देखने को मिलेंगे। सबसे बड़े शोध संस्थानों के शोध ये दिखाते हैं कि अगर हम कोयला जलाते रहे – जब तक इसकी उपलब्धता है, तो दुनिया के वायुमंडल मे कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा 1000 से ऊपर चली जाएगी, जो की पूरी दुनिया की एक तबाही को खड़ा करने के लिए काफी है। इससे खेती तबाह हो जाएगी, बरसात के पैटर्न एकदम बदल जाएंगे (कभी सूखा, कभी बाढ़), दुनिया का तापमान इतना ज़्यादा होगा की तूफानों की संख्या और तेज़ हवा बहेगी, ध्रुवों पर बर्फ तेज़ी से पिघलने लगेगा, जंगल मे आग और तेज़ी से बढ़ जाएगी, ताप की लहर से मरने वालों की संख्या भी बहुत बढ़ेगी। कोयला को बहुत पहले काला सोना बोला गया था, अब ये काला अभिशाप के रूप में उभर रहा है।

बिजली और ऊर्जा चाहिए, लेकिन कोयला नहीं चलेगा – तो करें क्या ?

यह तो हम सब का प्रश्न है और कुछ वर्ष पहले तक इसका सही और साफ उत्तर देना मुश्किल था। लेकिन जिस तेज़ी से पुनःनवीकृत (रिन्युएबल) ऊर्जा के विभिन्न प्रयोग सफल हो रहे हैं, उससे आज विकल्प खुल गये। पिछले 5–7 साल से सौर ऊर्जा की कीमत में लगातार और भारी गिरावट आई है, पवन ऊर्जा आज पूरी दुनिया में सबसे तेज़ी से बढ़ रही है। पिछले दो साल लगातार पुनःनवीक्रत ऊर्जा से बिजली बनाने बाले संयंत्र में निवेश की मात्रा कोयले और गैस में निवेश की मात्रा से ज़्यादा थी। कुछ शोध से ये अनुमान लगाया जा रहा है की 2018–20 तक सोलर फोटोवोल्टेयिक पनेल से बनने वाली ऊर्जा की कीमत कोयला से बनने बाली उर्जा की कीमत से कम होगी। पवन ऊर्जा से बनने वाली बिजली कीमत के मामले मे आज की तारीख में भी कोयला बिजली को टक्कर देता है।

आज हमें यह समझने की ज़रूरत है कि आज की परियोजना के मुताबिक एक कोयला बिजली घर बनाने के क्या औचित्य हैं जिसको तैयार करने हेतु 5 साल चाहिएं, और वह जब तैयार होगा तब सौर बिजली उससे सस्ती होगी। क्या ये सही रास्ता है ? सौर या पवन ऊर्जा से बिजली बनने में भी कुछ कीमत चुकानी पड़ेगी, लेकिन कोयला बिजली बनाने मे चुकाई जा रही कीमत के मुकाबले वह कीमत इतना कम है कि सौर और पवन ऊर्जा एक दम सीधा चुनाव होना चाहिए। कोयला हमें सदियों पहले से आगे बढ़ाने में मददगार रहा है लेकिन आज दुनिया के सामने इससे बड़ा खतरा और कोई नहीं है। पिछले कुछ दशकों से राजनैतिक दलों के घोषणा पत्रों में पानी, खाना और खेती, ज़्यादा बिजली और औद्योगिकरण ने ले ली है।

सौम्य दत्ता, भारत ज्ञान विज्ञान जत्था एवं बियॉण्ड कोपेनहगेन कलेक्टिव,

भाग 4

जनता को जनता के पैसों से उजाड़ने की तैयारी परियोजनाओं की वित्तीय सहायता पर एक सक्षिप्त नोट

भारत विकासशील देशों में गिना जाता है। ऐसा माना जाता है कि भारत को अगर विकसित देशों में शामिल होना है तो उसे आपनी आर्थिक वृद्धि दर को बढ़ाना होगा, और आर्थिक वृद्धि दर तभी बढ़ेगी जब हमारे देश में बड़ी ढांचागत विकास परियोजनायें आयेंगी। इन विकास परियोजाओं को पूरा करने की क्षमता सरकार में नही है इसलिये इनको निजी हाथों में सौंपा जाना चाहिये। पिछले कुछ दशकों में इन विकास परियोजनाओं में निजी कम्पनियों का दखल काफी हद तक बढ़ गया है। विशेष तौर पर वैश्वीकरण और उदारीकरण के बाद अचानक से देश में हाइवे, एक्सप्रेसवे, जलविद्युत परियोजनाऐं, हवाई अड्डे, शहरी संरचना, कोयले पर आधारित परियोजनायें, स्टील, बाक्साइट, और खनन परियोजानाओ की बाढ़ सी आ गई है।

जब ये परियोजनाऐं आती हैं तो इनको बड़ी मात्रा में ज़मीन, पानी, जंगल, खनिज पदार्थों, श्रमिकों, बिजली और पैसो की आवश्यकता पड़ती है। जहां भी ये परियोजनायें हैं, या आ रही हैं अथवा आ चुकी हैं, वहां स्थानीय समुदाय और सगंठन मिलकर संघर्ष कर रहे है। इस तरह की सभी परियोजनाओं के आने से विस्थापन, लघु उद्योगो का विनाश, भूअधिग्रहण, प्राकृतिक संसाधनों की लूट, प्रदुषण, परिवारों मे हिंसा, महिला हिंसा, असमानताऐं और भेदभाव, कम्पनियों द्वारा रोज़गार का लालच,, पुलिस हिंसा जैसी सभी समस्याओं का सामना उस जनता को ही करना पड़ता है जिसके नाम पर सरकार ये विकास परियोजनायें लाती है या ला रही है। उनसे लोग अलग अलग तरीकों से लड़ रहे हैं। इतिहास इसका गवाह है कि आज तक जो भी परियोजनाएं आयी हैं स्थानीय समुदाय को इसका लाभ शायद ही कभी हुआ हो, और समुदाय को उसके खिलाफ खड़ा होकर अपने हक की लड़ाई लड़नी पड़ती है।

भारत में परियोजनाओं के वित्तपोषण पर कम ही अध्ययन हुये हैं। विश्व बैंक समूह और एशियाई विकास बैंक जैसी कई अंतरराष्ट्रीय संस्थाऐं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इन परियोजनाओं या उससे सबंधित अन्य क्षेत्रों मे वित्तीय सहायता देती रही हैं। यह वित्तीय सहायता की आड़ मे हमारे देश की जनहित योजनाओं को भी प्रभावित करती रही है, जिसके परिणामस्वरूप कई जनहित क्षेत्रो को निजी हाथों मे सौंपा जा चुका है और उसको समुदाय किसी ना किसी रूप में भुगत रहे हैं। परियोजनाओं की जानकारी और उनके वास्तविक तथा नकारात्मक प्रभावों को पहचानने की क्षमता के अभाव में विशेष रूप से वित्तीय सहायता देने वाले जो हमेशा परदे के पीछे से काम करते रहे हैं भारत मे उनको निशाना बनाने और सही लक्ष्य तक पहुंचाने में समुदाय की आवाज़ अक्सर कमज़ोर पड़ती है।

परियोजनाओं के रीढ़ की हड्डी माने जाने वाली, वित्तीय सहायता कहां से आती है और कौन देता है? क्या पैसा या वित्तीय सहायता देने वाली संस्थाओ की कुछ पर्यावरण और सामाजिक सुरक्षा नीतियां हैं? यदि हैं तो वो क्या हैं? क्या उनको कम्पनी राज और जल, जगंल और ज़मीन को लूटने वालों से, इन आन्दोलनों या संघर्षों में लड़ने के लिये एक हथियार के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

वित्तीय संस्थाएं: हम हर रोज़ पैसों या वित्त से जुडे कामों के लिये इन संस्थाओं के संपर्क मे आते हैं। इनमे कुछ देशी संस्थाएं हैं तथा कुछ संस्थाएं विदेशी भी हैं। इनको अलग अलग नामों से जाना जाता है तथा यह कई प्रकार की हैं। देश की संस्थाएं जिनको हम राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएं कहते हैं में सरकारी बैंक, निजी बैंक, गैरबैक और कार्यक्षेत्र की संस्थाऐ शामिल हैं। विदेशी संस्थाएं जिनको अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएं कहते हैं, दो प्रकार की हैं– एक जो कई देशों के बीच वित्तीय सम्बंधों पर बात करती है या सहायता देती है उसे बहुदद्देशीय संस्थाऐं कहते हैं जैसे विष्व बैंक, एशियन विकास बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोश, दूसरी जो दो देशों के बीच किसी विशेष कार्य हेतु वित्तीय करार करती हैं जिसे द्वविदशीय वित्तीय संस्था कहते हैं। यह करार किन्हीं दो दशों के बीच या उनकी सरकारी बैंक, निजी बैंक या गैरबैंक के साथ होता है।

वित्तीय संस्थाओं की भूमिका: देश में जो भी हाइवे, एक्सप्रेसवे, जलविद्युत परियोजना, हवाई अड्डे, शहरी संरचना, कोयले पर आधारित परियोजनायें, स्टील, बाक्साइट, और खनन परियोजानाऐं आ रही हैं, कहीं ना कहीं उपरोक्त संस्थाऐं ही इन परियोजनाओं में वित्तीय अनुदान, वित्तीय सहायता, ऋण विभिन्न नामों से अपना पैसा मुनाफा कमाने के लिए विकास के नाम पर लगा रही हैं। किसी भी परियोजना को विशेष तौर पर जो बड़ी परियोजनाएं हैं तीन भागों में देख सकते हैं। पहला ढांचागत परियोजना, परियोजना हेतु कच्चे माल की आवश्यकता, और उसके उत्पादन एवं वितरण। ये परियोजनायें मुख्य तौर पर अपना पैसा न लगाकर बाज़ार से पैसा बटोरती हैं जिसके तहत कई तरह के आयामों का उपयोग करती हैं। ये मुख्यरूप से राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाऐं और अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं पर आधारित रहती है। जिसमें वे परियोजना फाइनेंस के नाम पर, ऋण, अनुदान और सामानय शेयर या परियोजना सदस्य जैसे कई तकनीकी नामों का आविश्कार कर वो इन बैंकों से पैसा बटोरते हैं।

परियोजना वित्तीयपोषण को जानने के लिये हमने एक पायलट अध्ययन किया जिसमें हमने कोयला आधारित बिजली परियोजनाओं को चुना। उन परियोजनाओं मे जो ढांचागत निवेष वित्तीय संस्थाओं द्वारा किया गया है उसी को हमने अपने इस अध्ययन में लिया है। इस अध्ययन के दौरान पाया कि जिन परियोजनाओं का वित्तीयपोषण खोज रहे हैं वो इतना आसान नहीं है। सरकारी परियोजनाओं में निवेश किये जाने वाली संस्थाओं और उनके आकडों को आप किसी ना किसी माध्यम से खोज सकते हैं। जिसमें आप सूचना के अधिकार कानून का भी उपयोग कर सकते हैं। लेकिन निजी क्षेत्रों में निवेश करने वाली संस्थाओं का पता करना मुश्किल है। संस्थाएं और परियोजनाऐं दोनों के नाम और आकडें कहीं भी आम जनता की पहुंच में नहीं हैं। एक तरफ जनता के संसाधनों को सरकार विकास के नाम पर निजी हाथों मे सौंपे जा रही है, तो दूसरी तरफ इन विकास परियोजनाओं की जानकारी जनता की पहुंच से बाहर है। इस अपारदर्शी और गैरज़िम्मेदार व्यवहार को चुनौती देनी होगी। यह केवल एक क्षेत्र ही है जिसका अध्ययन किया गया। अभी इसके तीन भागों का अध्ययन किया जाना चाहिये। समानरूप से अन्य क्षेत्रों मे भी इस प्रकार के अध्ययन किये जाने हैं।

इस अध्ययन के दौरान कोयले पर आधारित परियोजनाओं के वित्तीय विवरण का मानचित्रण किया गया। जिसमें पहले यह माना जा रहा था कि इन परियोजनाओं में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं का निवेश काफी बड़ा होगा। लेकिन यह मिथ्य तब टूट गया जब प्राप्त आकडों का विश्लेषण किया गया और पाया कि इन परियोजनाओं मे निवेशित पैसों का 91 प्रतिशत पैसा राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं/बैंको का है जबकि अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं ने 9 प्रतिशत पैसा ही निवेश किया है। हमारे देश की सबसे बड़े सरकारी बैंक माने जाने वाले भारतीय स्टेट बैंक और उससे जुड़े 5 अन्य बैकों ने सबसे अधिक पैसा इन परियोजनाओं मे निवेश किया है। जिसको हम नीचे दी गई तालिका से सभी सरकारी बैकों का कोयला बिजली परियोजनाओं में निवेशित पैसों की जानकारी है।

राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा कोयला आधारित परियोजना में निवेश विवरण:

बैंक के नाम	कितने परियोजनाओ को पैसा दिया है	कितना दिया है (करोड)	कितने मेगॉवाट बिजली
भारतीय स्टेट बैंक	24	59650	43970
बीकानेर और जयपुर स्टेट बैंक	16	1667.78	32300
पटियाला स्टेट बैंक	12	1220	21250
हैदराबाद स्टेट बैंक	11	1279.34	23400
तृवनकोर स्टेट बैंक	8	554.89	13770
केपिटल भारतीय स्टेट बैंक	5	3998	10000
सौराष्ट्र स्टेट बैंक	1	100	1200
मैसूर स्टेट बैंक	6	533	9520
भारतीय स्टेट बैंक इन्दौर	5	349.89	10960
बैंक ऑफ बड़ौदा	19	3960	33440
इंडियन बैंक	14	2172.12	23080
बैंक ऑफ इडिया	16	5072.4	28510
सेन्ट्रल बैंक	13	2438	26340
देना बैंक	7	500	11730
सिंडीकेट बैंक	10	1730.12	19090
इलाहाबाद बैंक	13	2263	24780
पंजाब एंड सिंध बैंक	8	1116	14290
कॉर्पोरेशन बैंक	13	1919.6	27860
बैंक आफ महाराष्ट्रा	5	595	10430
पंजाब नेशनल बैंक	28	12574	52590
आईडीबीआई	14	13184	26390
विजया बैंक	7	1344.22	14520
ओरियंटल बैंक ऑफ कॉमर्स	19	2127.4	40320
इंडियन ओवरसीज बैंक	12	3123	22860
यूको बैंक	15	2742.5	29830
यूनियन बैंक ऑफ इंडिया	15	2298	29230
यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया	17	4278.985	34830
केनरा बैंक	12	2288	18260
आन्ध्रा बैंक	16	2178	30850

इन परियोजनाओं मे जो राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाऐं या बैंक पैसा निवेश कर रही है उनके पास कोई भी सामाजिक या पर्यावरण सुरक्षा नीति नहीं है। एक तरफ एक किसान अगर छोटा सा भी ऋण लेने की कोशिश करता है तो उसको अपना ऋण मंजूर करवाने मे इतने धक्के खाने पड़ते है कि ऋण का आधा हिस्सा आने जाने के खर्च और बैंक के कर्मचारियों को खुश करने मे ही खर्च हो जाता है। दूसरी तरफ ये बैंक बिना किसी पर्यावरण एवं सुरक्षा नितियों के कारर्पोरेट जगत को हज़ारों करोड़ रूपयों का ऋण दे रहे हैं जिन पर नियंत्रण रखने के लिये कोई तंत्र नही है। देश के लोकतांत्रिक और संवैधानिक नीतियों के विपरीत जा कर ये वित्तीय संस्थाएं, मुख्य रूप से सरकारी संस्थाएं परियोजनाओं को उधार या ऋण दे रही हैं। इसलिये परियोजनाओं का नकारात्मक प्रभाव मानव जीवन और पर्यावरण पर हो रहे हैं उसके लिये जितने परियोजना मालिक ज़िम्मेदार हैं उतना ही ज़िम्मेदार बैंक भी हैं। एक तरफ इन बैंको से परियोजनाओं को कैसे उधार दिया जाये या ये परियोजनाऐं नुकसान में ना जाये या इनके पुराने ऋण को नये ऋण के साथ कैसे नवीनीकरण कर ऋण दिया जाये ताकि बैंक और परियोजनायें विसंगतियो से बच सकें। इस पर ताबड़तोड़ अध्ययन किये जा रहे हैं। लेकिन दूसरी तरफ परियोजना में निवेश कर इन बैंको या संस्थाओं द्वारा जो गैरज़िम्मेदारी और अपारदर्शिता बरती जा रही है और उससे प्राकृतिक संसाधनों, समुदायों, और अर्थव्यवस्था पर जो प्रभाव पड़ रहा है, उसके असर को आम जनता झेल रही है उस पर कोई चर्चा नही है और ना ही इनको निगरानी और नियत्रंण के लिये कोई केंद्रीय तंत्र है।

> "सिगरौली मे रिलायंस को सासन अल्ट्रा मेगा पावर परियोजना स्थापित करने के लिए 14 बैंकों ने संघ बनाकर फाइनेंस किया, जिसका नेतृत्व देश की सबसे बड़ी सरकारी बैंक भारतीय स्टेट बैंक ने किया है। इस परियोजना की अनुमानित लागत 20000 करोड़ रूपये हैं जिसके लिए प्रोजेक्ट फाइनेंस के आधार पर निवेश किया गया। इस परियोजना मे अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं जिसमें चाइना डेवलपमेंट बैंक, बैंक ऑफ चाइना, आयात निर्यात बैंक ऑफ यूनाइटेड स्टेट, और स्टैन्डर्ड चार्टर्ड बैंक के अलावा इस परियोजना की हस्तांतरण और वितरण लाइन में विश्वबैंक द्वारा निवेश किया जा रहा है। "

इसके अलावा निजी बैंक, गैर सरकारी बैंक जैसे जीवन बीमा कारर्पोरेशन या एलआईसी, घर व शहर विकास कारर्पोरेशन, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक जैसी सभी संस्थाऐं इन बड़ी परियोजनाओं के द्वारा कार्पोरेट जगत मे पैसा निवेश कर रही है। इन संस्थाओं द्वारा भी बिना किसी सामाजिक और पर्यावरणीय सुरक्षा नीति के धड़ल्ले से परियोजनाओं मे निवेश किया जा रहा हैं। राष्ट्रीय संस्थाओं या बैंकों का निवेश कोयले पर आधारित परियोजनाओं में अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के निवेश की अपेक्षा कई गुना अधिक है। इसलिये इन संस्थाओं को हमे जताना पड़ेगा की आपके द्वारा किये जा रहे निवेश से पर्यावरण और मानव समाज दोनों को ही प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से नुकसान पहुंच रहा है। अपने निवेश के लिये एक सषक्त पर्यावरण और सामाजिक सुरक्षा नीति को अपनायें और बिना मानव जीवन और पर्यावरण को क्षति पहुचाये आप आपने निवेश व्यवसाय का संचालन करें। हम नीचे दी गई तालिका में कोयले पर आधारित बिजली परियोजनाओं में इन संस्थाओं का निवेश विवरण दिया गया है:

गैर बैंक सरकारी वित्तीय संस्थाओं द्वारा कोयला आधारित परियोजना में निवेश विवरणः

संस्थाओं के नाम	कितनी परियोजनाओं को पैसा दिया है	कितना पैसा दिया है (करोड़)	कितने मेगॉवाट बिजली
रूरल इलेक्ट्रिफिकेशन कार्पोरेशन	44	97080.00	83490.00
पावर फाइनेंस कार्पोरेशन	55	155818.9	103548.5
नेषनल केपीटल रीजनल प्लानिंग बोर्ड	1	500	1200
पॉवर ट्रेडिंग कॉर्पोरेशन	5	548.75	9320
इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट फाइनेंस कम्पनी	4	575	6580
इंडिया इन्फ्रास्ट्रक्चर फाइनेंस कम्पनी लि.	12	6258.1	22860
जीवन बीमा कार्पोरेशन या एलआईसी	20	5495	42880
हाउसिंग एवं अर्बन डेवलपमेंट कार्पोरेशन लि.	12	3274.34	24488.5
भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक	3	257.76	5040

निजी बैंक एवं संस्थाओं द्वारा कोयला आधारित परियोजना में निवेश विवरणः

संस्थाओं के नाम	कितनी परियोजनाओं को पैसा दिया है	कितना पैसा दिया है (करोड़)	कितने मेगॉवाट बिजली
करूर विज़्या बैंक	2	279.67	2400
आईसीआईसीआई बैंक	9	12050	14780
एचडीएफसी बैंक	1	0	1370
एक्सिस बैंक	12	2018	23740
तमिलनाडु मर्केन्टाइल बैंक	2	139	6400
फेडरल बैंक	3	650	4350
यस बैंक	2	450	5050
एल एंड टी फाइनेंस लि.	1	55	1980
एल एंड टी इन्फ्रा लि.	4	800	4540
कर्नाटक बैंक	3	210	3780
जम्मू एंड कश्मीर बैंक	4	260	7210
साउथ इंडियन बैंक	3	250	3890

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं विश्व बैंक, एशियन विकास बैंक जैसी बहुउद्देशीय संस्थाएं और हाल ही में द्विपक्षीय एजेंसियों ने तेज़ी से कोयले में अपने निवेश को बढ़ाया है। जिसमें चाइना, अमेरिका, जापान, कोरिया की एक्ज़िम बैंकों ने भी अपना निवेश बढ़ाया है, जिनका रोज़मर्रा के जीवन में हमारा कोई लेन देन नहीं है लेकिन ये कभी डैम के नाम से, कभी कोयला बिजली परियोजना के माध्यम से तो कभी मेगा रोड के नाम पर किसी ना किसी रूप में हमारे जन जीवन पर लगातार असर डाल रही है। और ये हमारे जीवन मे इस प्रकार घुस चुकी है कि वो हमें भी पता नहीं चलता है। लेकिन इसका पता लगाना चाहिये क्योंकि इन संस्थाओं का निवेश भले ही कम है लेकिन इनका असर बहुत ज़्यादा है। ये हमारे देश के प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करने के अलावा हमारे देश में मौजूद जनहित नीतियों के विरूद्ध भी काम कर रही हैं। इन संस्थाओं का कद विश्व मे काफी बड़ा है और भारत जैसे विकासशील देश के लिये तो और भी बड़ा, क्योंकि ये संस्थाऐं देश के विकास के नाम पर भरपूर पैसा अलग अलग योजनाओं के नाम से निवेश कर रही है। इनका कद बड़ा होने के कारण जहां भी ये संस्थाऐं छोटी से छोटी रकम भी निवेश करती हैं तो उस क्षेत्र या उस परियोजना में अन्य राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं/बैंको को निवेश करने की अपने आप ही मंजूरी मिल जाती है, और फिर ये राष्ट्रीय वित्तीय संस्था/बैंक उस क्षेत्र या परियोजना से जनजीवन पर होने वाले असर और नुकसान को नहीं देखते है। सभी कानून और नियमों को ताक पर रख कर कागज़ी कार्यवाही में वे केवल औपचारिकता ही निभाते हैं। हालांकि इन अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के पास कहने को ही सही लेकिन कुछ सामाजिक और पर्यावरणीय सुरक्षा नीतियां हैं, जिनको उन्हे परियोजनाओं को फाइनेंस करते समय लागू करना होता है। इसके तहत इन पर निगरानी और नियत्रंण करने के लिए कुछ संस्थाऐं बनाई गई हैं जहां पर प्रभावित व्यक्ति या समुदाय अपनी शिकायत दर्ज करवा सकता है।

जैसे विश्व बैंक समूह की निजी क्षेत्रो में कार्यरत संस्थाऐं इन्टरनेशनल फाइनेंस कार्पोरेशन (आईएफसी) और बहुउद्देशीय निवेश गारंटी ऐजेंसी (मीगा) हेतु स्वतंत्र जबावदेही तंत्र के रूप में कार्य करने वाली संस्था अनुपालन सलाहकार लोकपाल (सीएओ) है। सीएओ, आईएफसी और मीगा ने जिन परियोजनाओं में निवेश किया है उन परियोजना से प्रभावित लोगों की शिकायत दर्ज कर उसकी जांच कर सकता है। उसी प्रकार विश्व बैंक समूह के इंटरनेशनल बैंक फॉर रिकंस्ट्रक्शन एण्ड डेवलपमेट और इंटरनेशनल डेवलपमेट एसोसिएशन हेतु निरीक्षण समितिया हैं जो उपरोक्त दोनो संस्थाओं द्वारा जिन परियोजनाओं में निवेश गया है, उनसे प्रभावित व्यक्तियों या समुदायों की शिकायत दर्ज कर उस पर जांच और सुनवाई करता है। समान रूप से एषियन विकास बैंक के निवेश पर अनुपालन निरीक्षण समिति शिकायत लेती है। नीचे दी की तालिका से इन संस्थाओं द्वारा कोयले पर आधारित बिजली परियोजनाओं मे अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा किये गये निवेश का विवरण दिया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा कोयला आधारित परियोजना में निवेश विवरण

संस्थाओं के नाम	कितनी परियोजनाओं को पैसा दिया है	कितना पैसा दिया है (करोड़)	कितने मेगॉवाट बिजली
इन्टरनेशनल फाइनेंस कार्पोरेशन	1	2200	4000
एशियन डेवलपमेंट बैंक	3	3583.1	9320
नार्डियोक इन्वेस्टमेंट बैंक	2	262.53	4800
बैंक आफ टोक्यो – मित्सुबिसी	6	1357.98	16300
मिजो कार्पोरेट बैंक	9	1712.82	25220
जापान बैंक ऑफ इन्टरनेशनल	4	5241.518	9120
यूनाइटेड नेशन एक्ज़िम बैंक	1	4300	3960
बीएनपी परिबस	2	1594.15	4000
केएफडब्ल्यू	4	3165.752	10320
चाइना डेवलपमेंट बैंक	4	15918.2	11220
बैंक आफ चाइना	1	आंकडे नहीं है	3960
चाइना एक्ज़िम बैंक	2	296.64	5280
स्टैण्डर्ड चार्टर्ड बैंक	2	180.292	4620
चाइना एक्सपोर्ट एंड क्रेडिट इन्श्योरेंस	1	1680.89	3960
कोरिया एक्ज़िम बैंक	2	4064.2	6980
बार्कलेस बैक	6	1267.59	17030
रॉयल बैंक आफ स्कोटलैण्ड	9	3841.52	25680
एचएसबीसी	1	180.292	1320
एचएसबीसी एडं बीएनपी परिबस	1	178.38	2980
इंडस्ट्रियल कॉमर्स बैंक ऑफ चाइना	1	आंकडे नहीं है	3300

अब सवाल यह खड़ा होता है कि इन राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं/बैंको के पास पैसा कहां से आता है। जैसे एलआईसी का काम है लोगों को जीवन बीमा के नाम पर अलग अलग बीमा योजना देना और उस योजना के तहत जो भी पैसा आता है उस पैसे को अपने मुनाफे हेतु बड़ी परियोजनाओं में निवेश करना। उसी तरह घर व शहर विकास कार्पोरेशन, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक भी इस तरह की योजनाएं लोगों को दे कर उनसे पैसा वसूल कर या विश्व बैंक, एशियन डेवलपमेंट बैंक जैसी अन्य अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं को माध्यम

बनाकर परियोजनाओं में अपने पैसे निवेश करती है। वैसे ही आम जनता अपने पैसों का निवेश बैंक की कई योजनाओं में करती है या लोग अपना खाता खुलवाकर उसमें से कुछ पैसा रखते हैं और उन्हीं पैसों का उपयोग बैंक इन परियोजनाओं मे निवेश करते है। इसका मतलब है कि कहीं ना कहीं ये जनता का ही पैसा है जो इन परियोजनाओं के निर्माण में उपयोग किया जाता है, या ये कह सकते हैं कि जनता के पैसों का जनता को ही उजाड़ने, उसको दरबदर भटकने और उसके प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करने अथवां उन पर कब्ज़ा करने मे उपयोग किया जा रहा है। लेकिन जनता का पैसा उपयोग करने के बावजूद जनता के प्रति कोई ज़िम्मेदारी नहीं है उनकी सुरक्षा के लिये सामाजिक और पर्यावरण नीतियां उनके पास नहीं है। ना ही ऐसा कोई केन्द्रीय तंत्र देश में मौजूद है जो इन संस्थाओं द्वारा निवेश में बरती जा रही गैरज़िम्मेदार लापरवाही और अपराधिक अपादर्शिता पर नियंत्रण और निगरानी रख सके।

इस गैर ज़िम्मेदारी और अपारदर्शीता का अंत करने के लिये और हमारे प्राकृतिक संसाधनों और जन जीवन को बचाने के लिये जो अलग अलग निरंतर चल रहे संघर्षों में परियोजना की रीड की हड्डी कही जाने वाली वित्तीय सहायता या वित्तीयपोषण, फाइनेंस या वित्तीय या पैसों के लेनदेन को भी एक हथियार बनाकर उपयोग करना होगा, और इन वित्तीय संस्थाओं को सामाजिक और पर्यावरण सुरक्षा नीतियों को निवेश की शर्त बनाने हेतु मजबूर करना होगा।

राजेश कुमार

विद्युत मंत्रालय http://powermin.nic.in/power-sector-glance-all-india
कोयले पर आधारित बिजली परियोजनाओं का फाइनेंस मेपिंग

भाग 5

ज़मीन लूट की होड़ः इतिहास और वर्तमान

भारत मे कोयला खनन और उस पर आधारित परियोजनाओं के नाम पर ज़मीन की लूट की होड़ लगी है। पिछले कुछ वर्षों में कोयले से संबंधित कई विवाद और घोटाले सामने आये हैं इस के बावजूद भारत सरकार कोयला खनन और बिजली उत्पादन हेतु दोनों क्षेत्रों को निजी कम्पनियों के हाथों बेचना चाहती है। यह केवल कोयला खनन और बिजली उत्पादन तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह उसके बहुत आगे की सोच के तहत खनन और बिजली उत्पादन के नाम पर लाखों एकड़ उपजाऊ ज़मीन और घने जंगलो पर कब्ज़ा करना है और प्राकृतिक संसाधनो के दोहन के नाम पर हज़ारो सालों से बसे हुये समुदायों को दरबदर भटकने के लिये मजबूर करना है।

सिगरौली के संतलाल बैगा का कहना है कि "हमको विस्थापित हुये छः साल से अधिक हो चुके है लेकिन अभी तक काम नही मिला। ये बिजली कम्पनी; सासन आल्ट्रा मेगा पावर परियोजना कही और भी अपना घर बना सकती थी। लेकिन हमारी उपजाऊ ज़मीनें लेकर हमको इन पत्थरों वाली ज़मीन पर क्यों फेंक दिया जहां हम कोई काम भी ना कर सकें? हमारे पास ना तो कोई काम है ना कुछ खाने के लिये, और ना ही पीने के लिये पानी। यह हमारे लिये एक अभिशाप हो गया है। जहां से हमको विस्थापित किया गया है वहां कई कुए थे, यहां एक भी कुआ नहीं है। केवल एक हैण्डपंप है वो भी कम्पनी ने नहीं लगाया, वो हमारे आने से काफी पहले का है।" वहीं जीतलाल बैगा का कहना है कि "हम यहां भिखारी बन गये हैं। यहां ना तो जंगल हैं और ना ही काम, कहां से हम खाना लायें। मैं और मेरी पत्नी दोनों ही बारी बारी पास के कस्बे में भीख मांगने के लिये जाते हैं। उसी से हम अपना गुज़ारा करते हैं। उनकी पत्नी दुलेसरी कहती हैं कि जगंल हमारा स्थाई राषन पानी का भंडार था और वो हमसे छीन लिया गया है। अगर सरकार केवल मिट्टी खा कर ज़िंदा रह सकती है तो हम भी रह लेंगे और यदि वे ऐसा नहीं कर सकती तो हमें भी आय का कोई साधन दे। औार ये ही लोग हैं जिन्होंने हमारा घर, और जगंल छीना है। उनको कम से कम बूढ़े लोगों को कुछ पेंशन देनी चाहिये, नहीं तो हम अपने आपको कैसे बचाएंगे?"

कोयले पर आधारित बिजली परियोजना के लिए राज्य और केंद्र सरकार विकास के नाम पर धड़ल्ले से ज़मीनो का आवंटन कर रही है। इस पूरी प्रक्रिया में जिन लोगों की ज़मीन है उनकी मंशा का कहीं भी ज़िक्र नहीं होता है और जब ज़मीनी स्तर पर भूमि अधिग्रहण की बात आती है तो ना तो उनको कोई विकल्प दिया जाता है और ना ही किसी विकल्प के लायक छोड़ा जाता है। भारत के सुप्रीम कोर्ट, केंद्रीय सतर्कता आयोग, भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक एवं मीडिया ने कोयला परियोजनाओं और खनन के आवंटन और नीलामी में गड़बड़ीयों, भ्रष्टाचार, धोखाधड़ी, दुराचार और अनिमियतताओं की पुष्टि की है। इसके बावजूद जिन कोयला ब्लॉक को पूर्व की सरकारों द्वारा आवंटन किया गया था उसे बाद में उच्च न्यायालय ने अवैध ठहराया है। उन्हीं कोयला ब्लॉकों को वर्तमान सरकार वैध बनाने में लगी है। इस पूंजीवादी मानसिकता और कम्पनीराज के माध्यम से जल जंगल और ज़मीन पर कब्ज़ा करने की राजनीति का पुरज़ोर विरोध करना होगा ताकि सत्ताधारी लोगों की अंधी आंखें खुलें और बहरे कानों में लोगों की आवाज़ पहुंचे।

ज़मीन की लूट का अंतहीन इतिहास

भारत में सार्वजनिक ज़मीन की सरकारी लूट का संस्थानीकरण प्रारंभ हुए 500 वर्षों से ज़्यादा हो गए हैं। यह सिलसिला आज भी न केवल बदस्तूर जारी है बल्कि अब तो इसमें लाभार्थी के रूप में निजी क्षेत्र भी जुड़ गया है। ज़मीन की लूट की परंपरा का ब्रिटिश काल से वर्तमान तक के सफर की छानबीन पर एक महत्वपूर्ण आलेख।

नरेन्द्र मोदी सरकार के भूमि–अधिग्रहण संशोधन अधिनियम को लेकर बवाल मचा हुआ है। आरोप हैं कि यह संशोधन किसानों की निजी ज़मीन को कार्पोरेट हित में अधिग्रहण करने के लिए लाया जा रहा है। हम इस कानून के दायरे से बाहर निकलकर राज्य द्वारा सामुदायिक ज़मीन के अधिग्रहण और उसे उद्योगों को देने के मसले को देखने से समझ आएगा कि कंपनियों के लिए ज़मीन की सरकारी लूट का यह गोरखधंधा 400 साल से भी ज़्यादा पुराना है। इतिहास बताता है कि किस तरह राज्य पहले बाकायदा नियम,कानूनों और नीतियों के नाम पर सामुदायिक ज़मीन को अपने अधिकार में लेता है और फिर इस ज़मीन को व्यापारिक हित में लुटाता है। इसे दो उदाहरणों से समझते हैं। पहला इतिहास में अंग्रेजों के उदाहरण से और दूसरा वर्तमान में म.प्र. सरकार द्वारा 'लैंड बैंक' के माध्यम से सामुदायिक ज़मीन को सार्वजनिक हित में अधिग्रहण कर उद्योगों के नाम पर कंपनियों को देने से।

ब्रिटेन में 31 दिसंबर,1600 को एक चार्टर के माध्यम से रानी एलिजाबेथ प्रथम भारत और कुछ अन्य देशों से व्यापार करने के लिए ईस्ट इंडिया कंपनी को प्रभाव में लाई थीं। इसके चार्टर में कुछ अन्य अधिकारों के साथ कंपनी को उन देशों में ज़मीन खरीदने का अधिकार देना महत्वपूर्ण था। सूरत में कारखाना डालने के बाद, भारत में अपने पांव जमाने के लिए अंग्रेज ज़मीन के एक ऐसे टुकड़े के लिए छटपटा रहे थे जो उनके अपने स्वामित्व का हो और जहाँ वो अपना किला बना सकें। लेकिन मुगल राजा उन्हें कहीं भी पैर नहीं जमाने दे रहे थे। आखिर अंग्रेज सफल हुए। उन्होंने दक्षिण भारत में जहाँ मुगल प्रभाव नहीं था वहां चंद्रागेरी के राजा से 6 मील लम्बा और एक मील चौड़ा समुंद्र किनारे का टुकड़ा, 600 पौंड स्टर्लिंग सालाना किराए पर लिया। सन् 1639 में उस ज़मीन पर भारत में अपनी पहली किलेदार बस्ती बसाई। इस रहवासी हिस्से पर अपनी प्रभुसत्ता प्रदर्शित करने के लिए अंग्रेजों ने इस किले के अन्दर के अपने हिस्से को 'सफेद नगर' (व्हाइट टाउन) और स्थानीय लोगों की बसाहट को 'काला नगर' (ब्लैक टाउन) का नाम दिया जो बाद में मद्रास कहलाया। यह भारत के इतिहास में किसी भी व्यापारिक हित रखने वाली कंपनी का राज्य के स्वामित्व की ज़मीन खरीद कर अपना स्वामित्व स्थापित करने का पहला मामला था।

सन 1857 के विद्रोह के बाद जब ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथों से छीन कर ब्रिटेन की रानी और सरकार ने सत्ता सीधे अपने हाथ में ली, तब दुनिया और देश के इतिहास का सबसे बड़ा भूमि–अधिग्रहण हुआ। इसमें विशेष था आदिवासी के हक के जंगल और ज़मीन को राज्य के अधीन लाना। इसका सबसे पहला शिकार थे म.प्र. के होशंगाबाद ज़िले के पंचमढ़ी के जंगल, जहां अंग्रेज़ों के खिलाफ विद्रोह करने वाले आदिवासी सरदार भभूत सिंग कोरकू को सन1862 में जबलपुर जेल में फांसी दे दी गई और उनकी सारी ज़मीन (लगभग 15 हज़ार एकड़) पर अंग्रेजों द्वारा देश का पहला आरक्षित जंगल 'बोरी' बना दिया

गया। बाद में भारत में अंग्रेज़ों की वन नीति और कानून बनाने वाले बोडेन पॉवेल ने वर्ष 1875 ने 'वन कानून' बनाने का कारण देते हुए लिखा है, राजा महाराजा के ज़माने में कोई कानून नहीं होता था। उनकी मनमर्ज़ी चलती थी इसलिए हम एक कानून बनाकर इस ज़मीन का प्रबंधन करेंगे। लेकिन सन 1878 में अंग्रेजों द्वारा कानून बनने के समय म.प्र. का मंडला ज़िला मे सिर्फ 2.3 प्रतिशत ज़मीन 'आरक्षित वन भूमि' थी। जबकि कानून बनने के 15 सालों में 1893 तक जिले के आधा भू भाग अंग्रेजों द्वारा 'आरक्षित वन भुमि' में बदला दिया गया (इस आरक्षित वन से होकर गुज़रना या उसमें से पेड़ के गिरे पत्ते भी उठाना–उस समय मे अपराध था और आज भी अपराध है)। आज़ादी के समय देश में 14 करोड़ 7 लाख एकड़ ज़मीन वन विभाग के पास की थी।

इस कानून के बनने के पहले राजा महाराजा के समय में जिस ज़मीन को राजा के शिकारगाह और महल आदि के निर्माण के लिए आरक्षित किया गया था उसके अलावा बाक़ी ज़मीन और जंगल लोगों के उपयोग के लिए खुले थे। लेकिन अंग्रेजों के कानून से यह सरकारी बन गए। इन जंगलों में आज भी स्थानीय समुदाय चोर करार देकर प्रताड़ित किए जाते हैं। अंग्रेज़ों द्वारा इनका व्यापारिक हित के लिए उपयोग इतिहास के पन्नों में दर्ज है। सरकार ने जहां आज़ादी के बाद लाखों एकड़ जंगल औद्योगिकरण के नाम पर कंपनियों के हवाले किए वहीं सन् 1990 के रियो सम्मलेन में जंगल के 'ग्लोबन पब्लिक गुड' बनने के बाद से इन जंगलों को कंपनियों के लिए खुला करने के लिए लगातार योजना बनाई जा रही हैं। आखिरकर अब जंगलों को वनीकरण के नाम पर कंपनियों के लिए पूरी तरह खोलने के रास्ते खुल गए हैं।

म.प्र. के उदाहरण पर नज़र डालें, तो समझ आएगा कि केंद्र सरकार की सोच में परिवर्तन के साथ किस तरह से प्रदेश सरकारों की सोच बदलती है। वर्ष 2007 से म.प्र. सरकार सिर्फ बड़े शहरों के आसपास के गाँवों की इस ज़मीन को मद परिवर्तन कर इसे नजूल या कहें सरकारी ज़मीन में बदलकर उद्योगों को दे रही थी। उदाहरण के लिएः भोपाल ज़िले की हुजूर तहसील के ग्राम अचारपुरा, मनियाखेडी खोत और इस्माइल नगर के 592.37 एकड़ ज़मीन जो अक्टूबर 2007 के तहसीलदार की रिपोर्ट में चरोखर (चराई) के लिए आरक्षित दिखाई गई है। इस ज़मीन को 30 अक्टूबर को उप सचिव पर्यावरण और गृह निर्माण ने एक आदेश के ज़रिए 'बाह्य नजूल' मद में परिवर्तित कर शिक्षा ज़ोन के लिए आरक्षित कर दिया। इसके बाद 5 नवम्बर 2007 को 'धीरू भाई अंबानी ट्रस्ट' ने उस जमीन से कुल 125 एकड़ जमीन के उपर, 110 एकड़ जमीन 'धीरू भाई अंबानी इंस्टिट्यूट ऑफ इनफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी एंड कम्युनिकेशन' और 15 एकड बी. पी. ओ हेतू आवंटन के लिए आवेदन दिया, जिसे 21 नवम्बर 2007 को को म.प्र. के राजस्व मंत्री ने एक नोट–शीट के ज़रिए अपनी सैद्धांतिक मंजूरी भी दे दी।

केंद्र में सत्ता परिवर्तन और नए 'भूमि–अधिग्रहण' अधिनियम आने के बाद, म.प्र. सरकार ने अब बाक़ायदा नीति बनाकर प्रदेश के सभी छोटे–बड़े शहरों उद्योगों को ज़मीन देने के लिए 1 अप्रैल 2015 को एक नीति जारी की। पूरे प्रदेश में लगभग 300 ऐसे क्षेत्र चिन्हित भी कर लिए जिसमें राज्य मार्ग और स्मार्ट सिटी भी शामिल हैं। इसके लिए बाक़ायदा इस नीति के तहत, उद्योग विभाग को या उनके निगमों के आधिपत्य की अविकसित, विकसित, विकास किये जा सकने वाले भूमि व्यावसायिक प्रयोजन के लिए देने का अधिकार दिया। ग़ौर

करिए यह ज़मीन कहां से आएगी? म.प्र. सरकार के 'लैंड बैंक 2014' दस्तावेज़ पर नज़र डालें तो समझ आएगा कि म.प्र. सरकार ने इसमें लगभग 65 हज़ार हेक्टेयर (1.5 लाख एकड़) सरकारी ज़मीन उद्योग को देने के लिए चिन्हित की है। 186 औद्योगिक क्षेत्रों में 6222 हेक्टर 45 आधुनिक औद्योगिक विकास केन्द्रों में 8774 हेक्टेयर, के अलावा विभिन्न राजमार्गों के नज़दीक इन्वेस्टर कॉरिडोर के लिए 16. 334 हेक्टेयर भूमि सुरक्षित थी।

यह सरकारी ज़मीन कौन सी हैं ? अगर हम म.प्र. सरकार के 'कमिश्नर लैंड रिकार्ड्स' की वेबसाइट पर प्रदेश के सभी ज़िलों के नगरीय क्षेत्रों 'लैंड बैंक' की ज़मीनों की विवरण तालिका में से कुछ ज़मीनों की नवय्यत देखें तो समझ आएगा कि यह ज़मीन असल में सार्वजनिक ज़मीन है जैसे, चरनोई, खलिहान, शमशान, तालाब, कदीम, पारतल, आबादी, पहाड़ और ना जाने क्या–क्या नाम से दर्ज हैं। यह सब जमीनें मुगलों से लेकर अंग्रेज़ों के समय तक समुदाय हेतू अनेक तरह के उपयोग के लिए नियत थी। जिस काम के लिए ज़मीन नियत होती थी उन्हें गांव के 'बाजुल उर्ज' (राजस्व रिकार्ड) में दर्ज कर दिया जाता था। म.प्र. राजस्व संहिता के खंड 4 के अनुसार चरोखर, निस्तार और कास्त, पहाड़ आदि निस्तार मद की इस ज़मीन को 'बाह्य नजूल ज़मीन' में नहीं बदला जा सकता।

केंद्र का अध्यादेश आने के बाद अकेले म.प्र. सरकार 1.5 लाख एकड़ से भी ज़्यादा सामुदायिक अधिकार की ज़मीन को सरकारी ज़मीन बताकर उद्योगों को देने की योजना 'लैंड–बैंक,2014' में बना चुकी है, तो फिर पूरे देश के स्तर पर क्या हो रहा होगा? आज ज़रूरत है सार्वजनिक ज़मीन की इस लूट के खिलाफ किसान, आदिवासी, दलित और जनसंगठन आवाज़ उठाएं।

अनुराग मोदी, श्रमिक आदिवासी संगठन

वर्तमान विकास का भ्रमजालः
सरकारी दावपेंच और ज़मीनों की लूट

भूमि अधिकार कार्यकर्ता, किसान, मछुआरे, एवं प्रभावित समुदाय। अन्यायपूर्ण ज़मीन अधिग्रहण का खतरा अभी टला नहीं हैं!

केद्रं सरकार द्वारा भूमि विधेयक 2015 को पारित करने की पुरज़ोर कोशिश को देशव्यापी किसान आंदोलनों ने नाकाम कर दिया। लेकिन अब राज्य सरकारों को छूट दी जा रही हैं कि वह ज़बरदस्ती ज़मीन हथियाने के नए हथकंडे अपना सकें। इन्ही का एक संक्षिप्त विश्लेषण जनआंदोलनों का राष्ट्रीय समन्वय द्वारा किया गया है

1. पी. पी. पी. का भ्रमजाल

वैसे तो पी पी पी का अर्थ होता है पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (सार्वजनिक निजी साझेदारी) लेकिन अक्सर ये देखा जाता है कि सार्वजनिक हित तो सिर्फ एक छलावा है। पी पी पी का इस्तेमाल सिर्फ निजी कंपनियों को फायदा पहुंचाने के लिए होता है। एक तरफ सार्वजनिक हित के नाम पर जल, जंगल एवं ज़मीन हथियाई जाती है और जनता के पैसे उड़ाये जाते हैं और दूसरी तरफ पी पी पी परियोजना जब मुनाफे के चरण में पहुंचती है तब निजी खिलाड़ी इसका फायदा उड़ा ले जाते हैं। भूमि अधिग्रहण कानून, 2013 पी पी पी परियोजना के लिए कम से कम 70: सर्वसहमति का उल्लेख करती है। भूमि विधेयक, 2014 ने पी पी पी को इस प्रावधान से हटाने का पूरा इन्तज़ाम कर लिया था लेकिन असफलता हाथ लगी। अभी भी अनेकों निजी मुनाफे के लिए बनी परियोजनाएं पी पी पी के नाम पर धड़ल्ले से चल रही हैं। किसी भी परियोजना का समुचित विश्लेषण कर लेना ज़रुरी है।

2. भूमि संग्रहीकरण (लैंड पुलिंग) – आशा या झांसा?

राज्य सरकार ने किसानों और समुदायों को बहकाने के लिए लैंड पुलिंग नामक तरीका इज़ाद किया है। है तो ये बिलकुल अधिग्रहण के जैसा बस नाम में हेर फेर है। लैंड पुलिंग का इस्तेमाल करके सरकार भूमि अधिग्रहण 2013 के कानून को दरकिनार करते हुए ढ़ेरो ज़मीन बहुत ही सस्तें में हथिया रही है, जैसे आंध्र प्रदेश के नए प्रस्तावित राजधानी अमरावती में हुआ। विजयवाड़ा और गुंटूर के बीच 12200 हेक्टेयर जमीनें लैंड पुलिंग के नाम पर हथियाई, जिससे लगभग 90,000 छोटे एवं भूमिहीन किसान और खेत मज़दूर विस्थापित हुए। यह आबादी का 80 प्रतिशत है। बाकी के 20 प्रतिशत भू मालिकों को रहने एवं व्यापारिक प्लाट मिलेंगे। निष्कर्ष यह है कि लैंड पुलिंग से भू–मालिकों को थोड़ा लाभ मिल भी जाता है लेकिन भूमिहीन अपना सब कुछ गवा देते हैं। गुजरात ने तो लैंड पुलिंग के नाम पर एक नया कानून स्पेशल इन्वेस्टमेंट रीजन एक्ट 2009 पारित कर दिया है। अहमदाबाद से 150 किलोमीटर दूर धोलेरा क्षेत्र में 92,200 हेक्टेयर की जमीन पर स्मार्ट सिटी बनाने की कोशिश में लगी गुजरात सरकार ने 22 गाँवों के 50,000 लोगों को लैंड पुलिंग का झांसा दिया। गाँव वालों ने इस अधिनियम के खिलाफ हाई कोर्ट में जनहित याचिका दायर की हुई है। अभी तक अदालत के फैसले उनके पक्ष में रहे हैं।

3. राज्य स्तरीय भूमि अधिग्रहण कानून एवं विधेयक–केंद्र सरकार की जमीनों के लूट की खुली छूट, राज्य सरकारों की मनमानी

राजस्थान ने अपने राज्य के लिए नए भूमि अधिग्रहण बिल मसौदा 2015 में **SIA** को दरकिनार करते हुए पी पी पी के लिए सर्वसहमति के दायरे को 70 से घटा कर 60% कर दिया है। बुनियादी ढाँचे के अनेक प्रकार की परियोजनाओं को इससे मुक्त रखा गया है। राजस्थान में इस विधेयक का पुरज़ोर विरोध हुआ है. राज्यों को अधिग्रहण कानून बनाने की खुली छूट का फायदा फिर से मुनाफाख़ोर ले रहे हैं.

ज़मीन से जुड़े संघटनों को राज्य स्तरीय कानूनों का पूरा विश्लेषण करने की आवश्यकता है ताकि सामुदायिक अधिकारों की रक्षा की जा सके। विभिन्न राज्यों द्वारा बनाए गए कानूनों के अध्ययन से निम्नलिखित बातें सामने आयीं।

अ. भूमि वापस करने की नीति

केंद्रीय भूमि अधिग्रहण कानून 2013 के अंतर्गत ज़मीन के मालिकों या उसके उत्तराधिकारी को उपयोग में नहीं लाई गई भूमि वापस की जानी है, और इसके साथ राज्यों को बिना दावे वाली ज़मीन को लैंड बैंक में सम्मिलित करने का अधिकार दिया गया है। लेकिन राज्यों के नए नियम में कुछ राज्यों जैसे झारखंड, कर्नाटक, ओडिशा, सिक्किम और तेलंगाना ने बिना किसी ज़रुरत के ज़मीन वापस लेने के नियमों को बहुत पेचीदा बना दिया है। इससे भूमि के सीधे लैंड बैंक में चले जाने का रास्ता साफ हो गया है। लैंड बैंक बनाने के पीछे जो भावना भूमिहीनों को भूमि देने की थी वो अब बदल कर उद्योगों और निजी क्षेत्र के खिलाडियों को भूमि हस्तांतरण के लिए रह गया है।

ब. सिंचित बहुफसली कृषि भूमि का अधिग्रहण अन्य उपयोग के लिए

केंद्रीय भूमि अधिग्रहण कानून 2013 में सिंचित बहुफसली भूमि का अधिग्रहण' न करने के लिए साफ तौर पर प्राथमिकता दी है। लेकिन ओडिशा और असम जैसे राज्यों मे ऐसे भूमि का अधिग्रहण सरल बनाने के लिए राज्य स्तर पर दूसरे नियम भी बनाये गये हैं, जिसमें कृषि योग्य भूमि के बदले बराबर क्षेत्र की बंजर भूमि को विकसित करने के लिए खरीद कर कृषि विभाग को देना होगा या उसके लिए समतुल्य पैसे देने होंगे। वहीं पर झारखंड, कर्नाटक, केरल और तेलंगाना ने अधिग्रहण के लिए अधिकतम कृषि योग्य भूमि का निर्धारण किया हुआ है। झारखंड ने कुल सिंचित बहुफसली भूमि का दो गुना बंजर जमीन और वहीँ तेलंगाना ने वर्तमान कृषि योग्य भूमि का 15 गुना बंजर जमीन कृषि विभाग को विकसित करने हेतू देने का प्रावधान अपने–अपने राज्यों के कानून मे रखा है। गुजरात जैसे राज्यों ने ऐसे नियमों को कमज़ोर करके कृषि योग्य भूमि को दूसरे उपयोग के लिए खोल दिया है।

स. मुआवज़ा और विस्थापितों का पुर्नस्थापन और पुनर्वास

केंद्रीय भूमि अधिग्रहण कानून 2013 सिर्फ भूमि अधिग्रहण कानून न होकर इससे आगे बढ़ते हुए न्यायोचित और पारदर्शी मुआवज़ा, पुर्नस्थापन और पुनर्वास को भी समाहित करता है। लेकिन इसी बीच राजस्थान के भूमि अधिग्रहण बिल से पुर्नस्थापन और पुनर्वास को दरकिनार करते हुए उसके लिए भी आर्थिक मुआवज़ा देने का प्रावधान बनाया हुआ है। अन्य राज्यों ने भी अपने लिए अलग भूमि अधिग्रहण कानून बनाने और ऐसे जन विरोधी नियमों को लाने के लिए दिलचस्पी दिखाई है।

केंद्रीय कानून में वादे के अनुसार मिलने वाले चार गुना मुआवज़े को भी दबा कर मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और हरियाणा जैसे राज्यों ने शहरी और ग्रामीण इलाकों के लिए एक गुणक (दोगुना मुआवज़ा) रखा है। सिर्फ असम, कर्नाटक और त्रिपुरा ने अधिकतम गुणक रखा है जिससे ग्रामीण इलाकों में होने वाले अधिग्रहण में ज़मीन की कीमत का चार गुना मुआवज़ा मिल सकता है।

द. स्थानीय स्वशासीय निकायों जैसे ग्राम सभा की भूमिका

जब केंद्रीय कानून 2013 बना था तब स्थानीय स्वषासीय निकायों को सशक्त करना ध्यान में रखा गया था। कई राज्यों ने इस अधिकार को कमज़ोर करने की कोशिश की है। कर्नाटक ने इसके अधिकारों को सिर्फ अनुसूचित क्षेत्रों में समेट कर रख दिया है। मध्य प्रदेश ने भी आश्चर्यजनक रूप से जिलाधिकारी को **SIA** रिपोर्ट को जांचने के लिए गठित की जाने वाली टीम के सदस्यों के निर्धारण के लिए अधिकार दे दिया है। इसमें ग्राम सभा से मनोनीत होने वाले एक सदस्य के चुनाव का अधिकार भी ज़िलाधिकारी को ही दे दिया गया है, जिससे परियोजना से प्रभावित होने वाले लोगों की आवाज़ पूरी तरह से दब जायेगी।

4. लोगों को बचाने वाले सभी नियमों की अवहेलना करते हुए निजी तोल मोल का प्रावधान

लोगों की भूमि को कॉर्पोरेट के लिए सरल रूप से उपलब्ध कराने के लिए निजी तोल मोल पर अलग अलग राज्यों में विशेष रूप से ज़ोर दिया गया है। इसकी अधिकतम सीमा कई राज्यों में बहुत अधिक रखी गई है जिसमे पुर्नस्थापन और पुनर्वास के कानून लागू नहीं होंगे। इसके लिए राज्यों को नियम बनाने का प्रावधान केंद्रीय कानून के भाग 2(3) और विशेष रूप से भाग 46 में दिया गया है। आंध्र प्रदेश, झारखंड, बिहार और तेलंगाना जैसे राज्यों ने इसकी सीमा 800 से लेकर 2100 हेक्टेयर तक रखी है। वहीँ त्रिपुरा और छत्तीसगढ़ ने इसकी सीमा बहुत ही कम जो कि 01 से 04 हेक्टेयर के बीच रखी है। फिर भी इसको लगातार ध्यान में रखते हुए इसकी जांच करती रहनी होगी, क्योंकि कई जगह कानूनों को ताक पर रखते हुए भूमियों का निजी क्रय हो सकता है।

जनआंदोलनों का राष्ट्रीय समन्वय, नई दिल्ली

CFA

सेन्टर फॉर फ़ाइनैन्शियल अकाउन्टेबिलिटी
R-21, साउथ एक्सटेंशन पार्ट-2, नई दिल्ली 110049
फोन: +91-11-49123696
ईमेल: info@cenfa.org वेबसाइट: www.cenfa.org